ध्रुवसर्वस्व।

जिस में

हरिभक्त श्रीध्रुवदासजी की कविता के
अनेक ग्रन्थों का संग्रह है
और जिसे

बाबू रामकृष्णवर्म्मा

अध्यक्ष भारतजीवन ने
काशी नागरीप्रचारिणी सभा से हस्त-
लिखित कापी पाकर हरिभक्तों के
लिये छापकर प्रकाशित किया।

काशी।
भारतजीवन प्रेस में मुद्रित हुआ।

सन् १९०४ ई०।

प्रथम बार १०००] [मूल्य ॥)

भूमिका।

यह काव्यग्रंथ हरिभक्त श्री ध्रुवदास जी का रचा है, जिसमें उन्होंने भक्ति और प्रेम का मानो समुद्र उमड़ा दिया है। काशीनागरीप्रचारिणी सभा की ओर से हिन्दी के प्राचीन ग्रंथों की हस्तलिखित कापियों की सदा खोज रहती है, उसमें गवर्मेण्ट भी सहायता करती है। इसकी छपी हुई रिपोर्ट में इस ग्रंथ का नाम देखकर हमने उक्त सभा के मन्त्री से इसके पाने की प्रार्थना की और उन्होंने कृपाकर इस ग्रंथ के छापने का अधिकार देकर हमें अनुगृहीत किया। हम आशा करते हैं कि और भी ग्रंथ हम उक्त सभा से प्राप्त कर क्रमशः प्रकाशकर सकेंगे।

रामकृष्ण वर्म्मा।
भारतजीवन, काशी।

ध्रुवदास।

ग्रन्थकर्ता ध्रुवदास जो गोस्वामी श्रीहित हरिवंश जी के शिष्य थे, श्री वृन्दावन में रहते थे। इनके बनाए निम्नलिखित ग्रन्थ बहुत छोटे छोटे उपलब्ध हुए हैं वृन्दावन सत, सिङ्गार सत, रसरत्नावली, नेहमञ्जरी, रहस्यमञ्जरी, सुखमञ्जरी, रतिमञ्जरी, बनविहार, रङ्गविहार, रसविहार, आनन्ददशाविनोद, रङ्गविनोद, नृत्यविलास, रङ्गहुलास, मानरसलीला, रहसिलता, प्रेमलता, प्रेमावली, भजनकुण्डली, वावनवृहदपुराण की भाषा, भक्तनामावली, मनसिङ्गार, भजनसत, मनशिक्षा, प्रीति चौबनी, रसमुक्तावली, और सभामण्डली। इनमें से केवल तीन ग्रन्थों के बनने का समय दिया है, अर्थात् सभामण्डली संवत् १६८१ में बनी, वृन्दावन सत संबत् १६८६ में और रहसिमञ्जरी संवत १६९८ में। इससे यह अनुमान होता है कि इनका समय संवत् १६४० से संवत् १७४० के लगभग होगा। इनके विषय में और कुछ विशेष वृत्तान्त नहीं मिलता, केवल "रास सर्वस्व" के निम्नलिखित छप्पय से विदित होता है कि ये रासलीला के बड़े अनुरागी थे और करहला ग्राम के रासधारियों के प्रेमी थे

"प्रथम सुमिरि हित* नाम धाम† धामी‡ जु बखानै ।
रसिक जनन के हेतु जुगल परिकर§ गुन गानै ॥
बरनौ लीला रास प्रतच्छ तासौं मति पागी ।
पुनि करि अनुकरन ग्राम ललिता अनुरागी ॥ ?
सदा रास रसमत्तहिय प्रेम सुधा पूरन कर्‌यो ।
बलि जाउँ देस कुल धाम को जहँ ध्रुवदास सु अवतर्‌यो" ॥१

* हित = गोस्वामी हित हरिवंश जी । † धाम = श्री वृन्दावन । ‡ धामी = श्रीराधाकृष्ण । § जुगल परिकर = भगवद्भक्त ।

बृन्दाबन शतक।

दोहा।

प्रथम नाम हरिवंस हित रटि रसना दिन रैन।
प्रीति रीति तब पाइये अरु बृन्दाबन ऐन ॥१॥
चरन सरन हरिवंस की जब लगि आयो नाहिं।
नव निकुञ्ज की माधुरी क्यों परसै मन माहिं ॥
बृन्दाबन थिति करन को कीनो मन उतसाह।
नवलराधिका कृपा बिन कैसे होय निबाह ॥३॥
यह आसा धरि चित्त में कहत जथामति मोर।
बृन्दाबन सुख रंग को काहु न पायो ओर॥४॥
दुर्लभ दुर्घट सबनि तें बृन्दाबन निज भौन ।
नवलराधिका कृपा बिन कहि धौं पावै कौन॥५॥
सबै अंग गुनहीन हौं ताको जतन न कोय ।
एक किसोरी कृपा तें जो कछु होय सु होय॥६॥
सोउ कृपा अति सुगम नहिं ताको कौन उपाव।
चरन सरन हरिवंस की सहजहिं बन्यो बनाव॥
हरि सुचरन उर धरति धरि मन बच कै बिश्वास।
कुँवरि कृपा ह्वै है तबहिं अरु बृन्दाबन बास॥

प्रिया चरन बल आनि कै बाढ़यो हिये हुलास।
बेई उर में आनिहैं वेई पुलिन प्रकास ॥ ८ ॥
कुंवरि किसोरी लाड़िली करुनानिधि सुकुमार।
बरनौं वृन्दाबिपिन को तिनके चरन सँभारि ॥
हेममई अवनी सहज रतन खचित बहु रंग ।
चित्रित चित्र विचित्र गति छबि के उठत तरंग॥
वृन्दावन झलकनि झमक फूले नैन निहार ।
रबि ससि दुति धरि जहां लगि ते सब डारे वारि॥
वृन्दावन दुति पत्र की उपमा को कछु नाहिं।
कोटि २ बैकुण्ठहू तिहि सम कहे न जाहिं ॥
लता लता सब कल्पतरु पारिजात सब फूल ।
सहज एक रस रहत है झलकत जमुना कूल ॥
कुंज कुंज प्रति प्रेम सों कोटि कोटि रति मैन ।
दिन दिन के प्रति करत हैं श्रीवृन्दावन ऐन॥१५॥
बिपिनराज राजत दिनहिं बरषत आनंद पुंज ।
लुब्ध सुगन्ध पराग रस मधुप करत मधु गुंज ॥
अरुन नील सित कमल कुल रहे फूल बहुरंग।
वृन्दावन पहिरे मनो बहु बिधि बसन सुरंग ॥

त्रिविध पौन नीको बहै जैसी रुचि जिहिं काल।
मधुर मधुर सुर कोकिला कूजत मोर मराल॥
मण्डित जमुना बारि यों राजत परम रसाल।
अति सुदेस सोभित मनो नील मनिन की माल॥
बिपिन धाम आनन्द को अस को सकै सराहि।
मदन केलि सम्पति सदा तिहि कर पूरन आहि॥
छिन छिन बन की छबि नई नवलजुगल के हेत।
समझि बात सब और की सखि बृन्दा सुख देत॥
देवी बृन्दाबिपिन की बृन्दा सखी सरूप।
जिहिंबिधिरुचिहै दुहुनकी तिहिंबिधिकरतअनूप॥
गावत बृन्दाबिपिन को नवल लाड़िली लाल।
सुखद लता फल फूल द्रुम अद्भुत परम रसाल॥
उपमा बृन्दाबिपिन की कहि धौं दीजै काहि।
अति अभूत अद्भुत सरस श्रीमुख बरनत ताहि॥
आदि अन्त जाके नहीं नित्य सुखद बन आहि।
माया त्रिगुन प्रपञ्च की पवन न परसत ताहि॥
बृन्दाबिपिन सुहावनो रहत एक रस नित्त।
प्रेम सुरङ्ग रचे तहां एक प्रान है मित्त॥२६॥

अति सरूप सुकुमार दोउ नव किसोर सुखरासि।
हरत चित्त सब सखिन के करत मन्द मृदु हास॥
न्यारो है सब लोक तें ब्रन्दावन निज गेह ।
लसत लाड़िली लाल जहँ भीजे सरस सनेह ॥
गौर स्याम तन मन रँगे प्रेम स्वाद रस सार ।
निकसत नहिं तिहि ऐन तें अटके सरस बिहार॥
बन है बाग सोहाग को राख्यो रसमय पागि ।
रूप रंग के फूल दोउ प्रीति लता रहे लागि ॥
मदन सुधा के रस भरे फूलि रहे दिन रैन ।
चहुंदिसि भ्रमत न तजत छिन भृंग सखिन के नैन॥
कानन में रहे झलकि के आनन बिधु की कांति।
सहजचकोरीसखिनकीअँखियांनिरखिसिराति॥
ऐसे रस में जनम गन नहिं जानत निसि भोर।
ब्रन्दावन में प्रेम की नदी बहै चहुंओर ॥ ३३ ॥
महिमा ब्रन्दाबिपिन की कैसे के कहि जाय ।
ऐसे रसिक किसोर दोउ जामे रहैं लोभाय ॥
बिपिन अलौकिक लोक में अति अदभुत रसकन्द।
नवकिसोर इक बयस द्रुम फूले रहत सुकन्द ॥

पत्र फूल फल लता प्रति रहत रसिक प्रिय चाहि।
नवलकुँवरि दृग छटा जल तिहि करि सींचे आहि॥
कुँवरि चरन अंकित धरनि देखत जिहि २ ठौर।
प्रियाचरनरज जानि कै लुढ़त रसिक सिरमौर॥
वृन्दावन प्यारो अधिक याते प्रेम अपार ।
जामे खेलत लाड़िली सर्बसु प्रानअधार ॥३८॥
सबै सखी सब सों जलै रँगी जुगल भ्रुव रंग ।
समै समै की जानि रुचि लिये रहत हैं संग ॥
वृन्दावन वैभव जितौ तितौ कह्यो नहिं जात।
देखत सम्पति बिपिन की कमलाहू ललचात॥
वृन्दावन की लता सम कोटि कल्पतरु नाहिं।
रज की तुल बैकुण्ठ नहिं और लोक किहि माहिं॥
श्रीपति श्रीमुख सब कह्यो नारद सों समुझाय।
वृन्दावन रस सबनि तें राख्यो दूरि दुराय॥४२॥
अंस कला अवतार जे ते सेवत हैं ताहि ।
ऐसे वृन्दाबिपिन को मन वच कै अवगाहि॥४३॥
सिव विधि ऊधव सबनि के यह आसा रहै चित्त।
गुल्मलता ह्वै सिर धरैं वृन्दाबनरज नित्त॥४४॥

चतुरानन देख्यो कछू वृन्दाविपिन प्रभाव ।
द्रुम द्रुम प्रति अरु पत्र प्रति औरै बन्यो बनाव॥
आप सहित सब चतुर्भुज सब ठां रह्यो निहारि।
प्रभुता अपनी सब गई तन मन तब रह्यो हारि॥
लोक चतुर्दस ठकुरई सम्पत्ति सकल समेत ।
सब तजि बसि वृन्दावनै रसिकन को रसखेत ॥
सकहितौबसुवृन्दाविपिनछिनछिनआयुबिहात।
ऐसो समै न पाइहौ भली बनी है बात ॥४८॥
छाड़ि स्वाद सुख देह को और जगत की लाज।
मनहिं मारि तन हारि कै वृन्दावन में गाज ॥
वृन्दावन के बसत में करै जो अन्तर आन ।
तिहि सम सत्रु न और कोउ मन बच कै यह जान॥
वृन्दावन के बास को जिनकै नाहि हुलास ।
माता पित्र सुतादि तिय तजिये तिन को पास ॥
और देस के बसतही अधिक भजन जो होय ।
इहि सम नहिं पूजत तऊ वृन्दावन रहै सोय॥
वृन्दावन में जो कबहुं भजन कछू नहिं होय ।
रज तो उड़ि लागे तनहि पीवै जमुना तोय ॥

वृन्दाविपिन प्रभाव सुनि अपनोई गुन देत ।
जैसे बालक मलिन को मात गोद भरि लेत ॥
और ठौर जो जन करै होत भजन तउ नाहिं।
ह्याँ रमि स्वारथ आपनै भजन गहै फिरि बांह ॥
और देस के बसतही घटत भजन की बात ।
वृन्दावन में स्वारथौ उलटि भजन ह्वै जात ॥
यद्यपि सब औगुन भर्यो तदपि करत तब ईठ।
हित सें वृन्दाविपिन को काहे दीजै पीठ॥५८॥
वृन्दावन तें अनतहीं जेतक द्यौस बिहात ।
ते दिन लेखे जिन लिखो व्यर्थ अकारथ जात॥
पशुपच्छीहितविपिनघर समझि बसै जो कोइ ।
प्रेम बीज तिहि ठौर तें तबहीं अंकुर होइ ॥
जैसे धावत बिषय को कुजन गहत बिच पानि।
ऐसे वृन्दाविपिन को सरन गहो ध्रुव आनि ॥
बसिबोवृन्दाविपिनका जिहितिहिविधिदृढ़होइ।
नहिं चूकै ऐसो समय जतन कीजिये सोय॥६१॥
कहँ तू कहँ वृन्दाविपिन आनि बन्यो संयोग ।
यहै बात जिय समुझि कै अपनो तजि सुखभोग॥

छनभंगुर तन जानि यह छाड़हु विषय कलोल।
कौड़ी बदले लेहि तू अदभुत रतन अमोल ॥
कोटि २ हीरा रतन अरु मनि विविध अनेक।
मिथ्या लालच छाड़ि कै गहु बृन्दावन एक ॥
नहिं मो मात पिता न हित नहीं पुत्र कोउ नाहिं।
इनमें जो अन्तर करै बस बृन्दावन माहिं ॥
नाते जेते जगत के ते सब मिथ्या मान।
सत्य नित्य आनन्दमय बृन्दाविपिनहि जान ॥
बसि कै बृन्दाविपिन मे ऐसी मन में राख।
प्रान तजौ बन ना तजौं कहौं बात कोउ लाख॥
चलत फिरत सुनियत यहै राधावल्लभ लाल।
ऐसे बृन्दाविपिन में बसत रहौ सब काल ॥
बसिबो बृन्दाविपिन को यह मन में धरि लेइ।
कीजै ऐसी नेम दृढ़ या रज में परै देह ॥ ६८ ॥
खंड खंड होइ जाइ तन अंग अंग सत टूक।
बृन्दवन नहि छाड़िये छाड़िब है बड़ि चूक ॥
पटतर बृन्दाविपिन की कहि क्यों दीजै काहि।
जिहि बन भुव की रेनु में मरिबो मंगल आहि॥
बृन्दावन के गुनन सुनि हित सो रज में लोटि।
जिहिसुखकोपूजतिनहीं मुक्तिआदि सुखकोटि॥

सुरपति पशुपति प्रजापति रहे भूलि तिहिठौर।
वृन्दावन वैभव कहौ कौन जानिहै और ॥७३॥
यद्यपि राजत अवनि पर सब तें ऊंचो आहि ।
ताकि सम कहिये कहा श्रीपति बन्दत ताहि ॥
वृन्दावन वृन्दाविपिन वृन्दाकानन ऐन ।
छिन २ रसना घोख कर वृन्दाबन सुखदैन ॥
वृन्दावन आनन्दघन तो तन नस्वर आहि ।
पसुज्योंजीवतविषयसुख काहे न चिन्तत ताहि॥
वृन्दावन वृन्दा कहत दुरित वृन्द दुरि जाहि ।
नेह बेलि हरिभजन की अति उपजै उरमाहि॥
वृन्दावन सुनि श्रवण करि वृन्दावन को गान ।
मन बच कै अति हेत सों वृन्दावन पहिचान ॥
वृन्दावन को नाम रटि वृन्दावन को देखि ।
वृन्दावन सों प्रीति करि वृन्दावन सुर लेखि ॥
वृंदावनहिं प्रनाम करि वृन्दावन सुख खानि ।
जो चाहत बिश्राम मन वृन्दावन उर आनि ॥
तजि कै वृन्दाविपिन को और तीरथहिं जात।
छाड़ि बिमल चिन्तामनिहीं कौड़ी को ललचात॥
पाइ रतन चीन्हों नहीं दीनो कर तें डारि ।
यह माया श्रीकृष्ण की मोह्यो सब संसार॥८२॥

प्रगट जगत में जगमगै वृन्दाविपिन अनूप ।
नैन अछत देखत नहीं यह माया को रूप ॥
वृन्दावन को रस अमल जिहि पुरान में नाहिं।
ताकी बानी परै जिन कबहूं श्रवनन माहिं ॥
वृन्दावन के जस सुनत जिनके नाहि हुलास ।
तिनको पास न कीजिये तजि भ्रुव तिनको पास॥
भवन चतुर्दश आदि दै ह्वै है सबको नाम ।
धुव कृत वृन्दाविपिन में सुख को सहजनिवास॥
कोमल चित सबसों मिलै कबहुं कठोर न होइ।
निरस्नेह निर्वैर रह ताको शत्रु न कोइ ॥ ८७॥
वृन्दावन इहिविधि बसै तजिकै सब अभिमान।
तृन तें नीचो आप को जानै सोई जान ॥८८॥
दूजे तीजे जो जुरैं साक पत्र कछु आय ।
ताही सों सन्तोष कै रहै अधिक सुख पाय ॥
देह स्वाद छुटि जाहि सब कछु होइ छीन शरीर
प्रेम रंग मनमें धरै विहरै जमुना तीर ॥ ६ ॥
युगल रूप की झलक उर नैन रहै झलकाइ ।
ऐसे सुख के रंग में राखि मनहिं रँगाइ ॥ ६१ ॥
आवै छबि की झलक उर नैनन झलकैं बारि।
चितवत स्यामल गौर तन सकहि न नेकु सँभारि॥

जीरन पट अति दीन लट हिये सरस अनुराग।
विवस सघन बनमें फिरै गावत युगल सोहाग॥
रस में देखत फिरै बन नैनन बन रह जाइ ।
कहुं २ आनँद रंग भरि परै धरनि थहराइ ॥
ऐसी गति ह्वै है कबहिं मुख निसरै नहिं बैन ।
देखि २ वृन्दाविपिन भरि २ ढारै नैन ॥ ९५ ॥
वृन्दावन तरुतर ढरै नैनन सुख के नीर ।
चिन्तित फिरै सुप्रेम बस स्यामल गौर सरीर ॥
परम सच्चिदानन्द घन वृन्दाविपिन सुदेस ।
जामें कबहूं होत नहिं माया काल प्रवेस ॥९७॥
सारद जौ सतकोटि मिलि कलपन करै विचार
वृन्दावन सुख रंग को कबहुं न पावै पार॥९८॥
वृन्दावन आनन्द निधि सब तें उत्तम आहि ।
मोतें नीच न और कोउ कैसे पैहौं ताहि॥९९॥
जिमि बौना आकाश फल चाहत है मनमाहिं।
ताको एक कृपा बिना और जतन कछु नाहिं॥
कुँवरि किसोरी नाम सुनि उपज्यो दृढ़ विश्वास।
करुनानिधिमृदुचित्तमति यातें बढ़ि जियआस॥

जिनको बृन्दाविपिन है कृपा तिनहिं की होय।
बृन्दाबन में तबहिं नर रहन पायहै सोय ॥
बृन्दाबन सत रतन की माला गुही बनाय ।
भाल भाग जाके लिखी सोई पहरै आय॥१०३॥
बृन्दाबन सुख रंग की आसा जो चित आहि ।
निसिदिन कण्ठ धरे रहौ नेकु न टारौ ताहि ॥
बृन्दाबन सत कहि कहैं सुनिहैं नीकी भांति ।
निसिदिन तिन उर जगमगै बृन्दाबन की कांति॥
बृन्दाबन की चिन्तवनि यहै दीप उर बार ।
कोटि जनम के तप अघनि काटि करत उजियार॥
बसि कै बृन्दाविपिन में इतनो बड़ो सयान ।
जुगल चरन के भजन बिन निमिख न दीजै जान॥
महिमा बृन्दाबिपिन की कहि न सकत मम जीह।
जाके रसना है सहस तिनहूं काढ़ी लीह॥१०८॥

इति श्रीभक्तहरिवंसकृत बृन्दाबनशतक समाप्त।

अथ शृङ्गारशतक लिख्यते।

दोहा।

हरिवंशचरन ध्रुव चिन्तवत होत जु हिये हुलास।
जो रस दुर्लभ सबनि कौं सो पैयत अनयास॥
व्यासनन्द पदकमलबल सकल सुखनि कौ सार।
रचि कीन्हौं सिङ्गारसत अद्भुत प्रेम विहार॥२॥
बाँधौ ध्रुव गुन सृङ्खला प्रथम चालिसऽरु तीन।
द्वितिय चालीस ऽरु तीसरी द्वै पर चालिस कीन॥
प्रथम शृङ्खला माहिँ कछु कह्यौ लाड़िली रूप।
निरखिलाल सखि रहे छकि सो छवि अतिहि अनूप॥
छिन छिन नेह कटाछजल सींचत पियहिय ऐन।
भाग पाइ सो कबहुँ ध्रुव या सुख पावैं नैन॥

सवैया।

कैसो फब्यो है नीलम्बर सुन्दर मोहि लियो मनमोहन माई। फैलि रही छवि अङ्गनि काँति लसैं बहु भाँति सुदेस सुहाई॥ सीस को फूल

सुहाग की कछु सदा पिय के मन कौं सुखदाई। और कछू न रुचे ध्रुव पीय कौं भावै यहै सुकुवारि लड़ाई ॥ ६ ॥

कवित्त।

राधिका कुँअरि प्यारी फुलवारी माँझ ठाढ़ी फुलकारी सारी तन सोभित बनाव कौ। लोइन बिसाल बाँके अनियारे कजरारे प्रीतम के प्रान हरे हरन सुभाव कौ ॥ चूरी मखतूली नीलमनिनि का कर बनी बेसरि सुदेस उर अँगिया कटाव की। कुन्दन की दुलरी औ मोतिन के हार हिये हित ध्रुव चारु चौकी लसति जराव की ॥ ७ ॥

जरकसी सारी तन जगमग रही फवि छवि की झलक मानो परी है रसाल री। उज्जल सुरंग अनियारी कोर नैननि की सीसफूल बेंदी लाल सोहै वर भाल री ॥ रतनजटित नीलमनि चौकी झलमलै हित ध्रुव लसै उर मोतिन की माल री। पानिप अनूप पेखें भूली है निमेखें चारु मन्द मन्द बेसरि के मुक्तन की हालरी ॥ ८ ॥

फवि रही सारी मृदु केसरी सुरंग रंग भींजी है फुलेल स्वच्छ सोंधे मोद में सनी। खुलि रही तामें आली अँगिया जँगाली गाढ़ी दमकत कण्ठ लर मोतिन की है बनी॥ मृगमद बेंदी लसै प्रीतम के मन बसै बेसरि झलक छवि बरषत है घनी। मुसकानि मन्द मुख रंग के तरंग उठैं सोहने रसीले नैन सैन मैं बिके धनी॥९॥

तन सुखमारी मिहीं भींजी है फुलेल मांझ तामें लाल अँगिया सुदेस कसनी कसी। सौंधे सगबगे बार बन्यो है साटौ सिँगार मुख पर डारे वारि कोटि कञ्ज औ ससी॥ चञ्चल छबीले बड़े सोहने रसीले नैन चितै नेकु अलबेली मन्द मन्द ले हँसी। हित ध्रुव विवस भ चितवतही रहि गे थिरकनि बेसरि की प्रीतम के ही बसी॥१०॥

काकरेजी सारी तन गोरे कैसी सोहियत पीत अतरौटा सौं दुरंग छवि न्यारी है। मुख की सुपानि अति चञ्चल हैं नैन गति देखें ध्रुव भूली मति उपमा कौं हारी है॥ बेंदी भाल नथ

सोहै बनै मोती मन मोहै बस भये पिय सुधि देह को बिसारी है । गहे द्रुम डारि एक रहि गये ताहि टक ऐसे वेष जब तें किशोरी जू निहारी है ॥ ११ ॥

पहिरे कुसुम-सारी सुरँग रँगीली प्यारी आली अलबेली भाँति रंग माहिँ ठाढ़ी है। केसरी सुरंग भीनो सौंधे सगबगो कीनो सोहै उर अँगिया कसनि अति गाढ़ी है ॥ फैलि रही अरुनाई तैसी भ्रुव तरुनाई मानो अनुराग रूप में झकोर काढ़ी है। बदन झलक पर परो है अलक आड़ देखें पिय नैननि ललक अति बाढ़ी है ॥ १२ ॥

सवैया ।

सारी सुरंग सुहो अति झीनो सुगन्ध सों भीनो महा सुखदाई । रची चुनि प्रान समान सुजान मे फूलनि मोदहू तें मृदुताई ॥ भूलि रही मति को गति हेरत जात नहीं उपमा भ्रुव गाई । रँगी पिय प्यार के रंग मनो ऐं कि अङ्गनि रूप तरङ्गनि छाई ॥ १३ ॥

सारी हरी मे हर्यो मन लाल को मोहनी मोहनी के तन सोहै। अँगिया तहँ लाल सुरंग बनी लहँगा तिहि रंग खरो मन मोहै॥ रूप की रासि सबै गुन-आगरी या छबि की उपमा कहो को है। राजै तहां ध्रुव कुञ्जबिहारिनि सो छबि लाल पलोपल जोहै॥ १४॥

कबित्त।

हँसनि में फूलनि की चाहनि में अमृत की नखसिख रूपही की बरषा सी होति है। केसनि की चन्द्रिका सुहाग अनुराग घटा दामिनी की लसनि दसनही की द्योति है॥ हित ध्रुव पानिप तरंग रस झलकत ताकों मनो सहज सिँगार सींव पोति है। अति अलबेली प्रिया भूषिताभरन बिन छिन छिन औरै और बदन की जोति है॥ १५॥

छबि सों छबीली खड़ी प्रीतम के रसभरी कोटि कोटि दामिनी न नखछबि पावहीं। चन्द कोटि मन्द होत मोतिन की कहा जोति नैकहो को चितवनि ढरे लाल आवहीं॥ देखत हैं रुचि

लिये मुखसोभा चित दियें परम प्रवीन प्यारी रुचि लै लड़ावहीं। हित ध्रुव छिन छिन मैन के तरंग बढ़ै प्रेम के हिंडोरे चढ़े मननि झुलावहीं ॥ १६ ॥

गोरी मृदु आँगुरिन मेंहदी को रंग फव्यो अतिही सुरंग कंजदलनि लजावहीं। मननि के बहु रंग हरित जँगालो छले जिहि पोरी जैसे बने पिय पहिरावहीं ॥ चिते छबि कर गहे नैननि कों छाइ छाइ चूमि चूमि माथे धरि आनि उर लावहीं। हित ध्रुव निसिदिन योंही रस रहे पगि जेही अंग मन परै तेही सचु पावहीं ॥

कञ्चन के वरन चरन मृदु प्यारी जू के जावक सुरंग रंगे मनहि हरत हैं। हित ध्रुव रही फबि सुमिल जे हरि छबि नूपुर रतन खचे दीप से बरत हैं ॥ रीझि रीझि सुन्दर कारनि पर पट धरैं आरसी सी लिये लाल देखिबो करत हैं। नख मनि प्रभा प्रतिबिम्ब झलमले कंज चन्दन के जूथ मानो पाइन परत हैं ॥ १८ ॥

दोहा ।

अद्भुत पद पल्लव प्रभा मृदु सुरंग छविऐन ।
छिन छिन चूमत प्यार सों रहत लाइ उर नैन॥

कवित्त ।

फूलि फूलि रहे सब फूल फुलवारी में के रीझि रीझि छवि आइ पाइनि में परी है । लाड़िली नवली अलबेली सुख सहजहीं निकसि निकुञ्ज तें अनूप भाँति खरी है ॥ नखसिख भूषन लावन्यही के जगमगें दीठि सौं छुवत सुकुमारताहू डरी है । हित ध्रुव मुसकानि हेरत बिकाइ रहे दामिनी की दुति अरु हीरन को हरी है ॥

कुंजन के आँगन में जहाँ जहाँ पग धरे छवि के बिछौना से बिछाये तहाँ जात हैं । रंग-भीनी लाड़िली निपट अलबेली भाँति अलबेले लोइन न कैहूँ ठहरात हैं ॥ नई नई माधुरी की सारु है सुभाइनि में मुसकानि मानो सुख फूल बिगसात हैं । सौंधे की सी बास ध्रुव फैलि रही चहूंओर रूपनिधि पानिप के पुंज बरषात हैं ॥

अलबेली चितवनि मुसकनि अलबेली अल-बेली चलनि ललन-मन हर्यो है। वृन्दावन-मही सब भई छबिमई आली पग पग पर मनो रूप झरि पर्यो है॥ कनक-वरन भये पत्र फूल पादप के आभा तन रही छाइ कुन्दन सो ढर्यो है। हित ध्रुव ऐसी भाँति झलकत तन-काँति चित-वत पिय-चित नेकहूं न टर्यो है॥ २२॥

देखत छबीली जू की छवि छके छबिनिधि ऐसो छबि देखें आली दृग नहि डारिये। अलबेली चितवनि हँसनि ललन पर मानो सुखपुंज रंग के प्रवाह ढारिये॥ छिन छिन नई नई छवि की तरंगछटा विवस करत प्रान कैसे कै सँभारिये। हित ध्रुव प्यारी जू के चरन चिह्न पर कोटि कोटि रति दुति मोहनी सी वारिये॥ २३॥

थिरकनि बेसरि के मोती की अनूप भाँति प्रीतम के नैन देखि अतिही लुभाने हैं। तिहि छवि की समान देवे कों न कछु आन याही तें बिहारीलाल आपुन बिकाने हैं॥ परे रूपसिंधु

साँझ जानत न भोर साँझ हित ध्रुव प्रेमही के रंग सरसाने हैं। प्यारी जू के मिलिबे को चिपित न होत केहूं कोटि कोटि जुग एक पल से बिहाने हैं ॥ २४ ॥

बड़े बड़े उज्वल सुरंग अनियारे नैन अंजन की रेख हिये हियरो सिरात है। चपलाई खंजन की अरुनाई कंजन को उजराई मोतिन की पानिप लजात है ॥ सरस सलज्ज नये रहत हैं प्रेमभरे चञ्चल न अञ्चल में कैसेहूं समात है। हित ध्रुव चितवनि-छटा जिहि कोद परे तिहि ओर बरषा सो रूप की ह्वै जात है ॥ २५ ॥

कौलपत्र सारी बनी सोंधेही के मोदसनी चितै रहे स्याम धनी मानो चित्र ऐन हैं। आँगी नील रही फबि कहि न सकत कवि मोतिन की झलकनि अति सुखदैन हैं ॥ चितवनि मैंन मई मुसकानि रसमई कोकिलाहू वारि डारी ऐसे मृदु बैन हैं। हित ध्रुव अंग अंग सबै सुख सारमई मन के हरनहार बाँके दोऊ नैन हैं ॥२६॥

रूपजल में तरंग उठत कटाछनि के अंग २ भौंरनि की अति गहराई है। नैनन कों प्रतिबिम्ब पर्‍यो है कपोलनि में तेई भये मीन तहां ऐसी उर आई है॥ अरुन कमल मुसकानि मानो फबि रही थिरकनि बेसरि के मोती की सुहाई है। भयो है मुदित सखी लाल को मराल मन जीवन जुगल ध्रुव एक ठांव पाई है॥२७॥

चलनि छबीली जी की चितवत छके पिय कहि न सकत कछु आजु और भाँति है। अलबेली रूपपुंज कुंज ते निकसि जब चन्द कोटि मन्द होत ऐसी तन काँति है॥ देखि हंसी भौंरी मृगी तेऊ तहँ। माहि रहीं भनक भनक सुनि भूलि सब जाति है। हित ध्रुव फूलनि की माल सी सहेली सबै ऐसे रहि गई मानो चित्रनि की पाँति है॥ २८॥

दोहा।

अद्भुत छवि की माधुरी चितै विवस ह्वै जाहिँ।
यहै सोच पिय प्रेम को रहत प्रिया उर नाहिँ॥

कवित्त।

छबि के छिपाइबे कों रस के बढ़ाइबे कों अंग अंग भूषन बनाये हैं बनाइ कैं। देखें नासा पुट-वेह प्रीतम भये विदेह याही हेत वेसरि बनाइ धरी चाइ कैं॥ रोम रोम जगमगै रूप को अनूप छबि सकै न सँभारि हँसि चितई सुभाइ कैं। हित ध्रुव विवस लटकि जात छिन छिन यातें सखी सोभा सब राखी है दुराइ कैं ॥३०॥

ऐसी है ललित प्यारीलालजू की प्रानप्रिया डीठि नहिं ठहरात कैसे कै निहारिये। काजर की रेख जहां पानन की पीक भारी और सुकुमारताई कैसे धौं विचारिये॥ ****। सहजही अंग २ रूप सार मोदमई हित ध्रुव प्रान न्योछावर करि डारिये॥ ३१ ॥

अनियारे नैनसर बेध्यो मन प्रीतम को विथकित चकित रहत बलहीने हैं। काजर की रेख तहां रही फबि निसरै न तरफि गिरत सखी अंक भरि लीने हैं॥ रसिककिशोर पिय महासूर प्रेम

रन नैनन तें नैन तऊ न्यारे नाहिं कीने हैं। हित ध्रुव प्यारी सुकुमारी रीझि देखें गति अति सुकुमार महा प्रेम रंग भीने हैं ॥ ३२ ॥

प्यारी जू की मुसकानि बीजुरी सी कौंधी जानि प्यारे जू के उर तें न रेख सी टरति है। भरि भरि आवैं नैन कैसेहूं न पावैं चैन बान की सी अनी हिये करकी करति है ॥ लाड़िली न-वेली अलबेली खानि माधुरी की सहज सुभा-ईनि में सर्बसु हरति है। हित ध्रुव नये नये छवि के तरंग देखें रीझि सीसचन्द्रिका पगनि कौं ढरति है ॥ ३३ ॥

हारनि के भार भारी ऐसी सुकुमारी प्यारी रसिक रँगीले लाल कीनी उर-हार सी। छवि के तमाल लपटानी रूप-बेलि मानो हँसनि दसन फूल फूले सुखसार सी ॥ नखसिख जगमगै रोम रोम प्रतिबिम्ब लसत हैं ऐसें जैसें आरसी में आरसी। हित ध्रुव दुहिं विधि देखें सखी चित्र भई चहूं कोद रहीं झूमि कंचन की डार सी ॥

अति अलबेली भाँति झूलैं अलबेली प्रिये सहज छबीली छबि नवल निहारहीं। सारी सुही सुरँग परत खिसि खिसि सखी वार वार प्यारे पिय फूल सों सँवारहीं ॥ जेहीं ओर अङ्ग पट भूषन झुकत पिय तिहिँ ओर मुरि मुरि प्रान जों सँभारहीं। हित ध्रुव प्रीतम की नाहिँ और दूजी गति छिन छिन तिनहीं के सुखहीं बिचारहीं ॥ ३५ ॥

सवैया।

रूप रसीली गुनीली छबीली रँगीली रँगीले के प्रान ते प्यारी। सुलज्ज सुरंग सुनैन विसालनि सोभित अंजन रेख अन्यारी ॥ महा मृदु बोलनि मोती की डोलनि मोल लिये ध्रुव कुंजविहारी। रहे मुख पाइ न ओर सुहाइ भये बस नेह के देह बिसारी ॥ ३६ ॥

कवित्त।

सोने तें सुरंग गोरी सोंधे तें सुबास अति मृदुताई पर वारौं जेतिक सुमन री। रूपहू कौं रूप जगमगत सकल बन आरसी कों आरसी

लसत ऐसो तन री ॥ फैलि रही तन प्रभा जहँा लौं बिराजै सभा हित ध्रुव चितै लाल भये हैं मगन री । प्रानिनि के प्रान अरु नैननि के नैन मेरे रीझि रीझि वार वार कहैं छुवै चरन री ॥

कौन भाँति कौन कांति कौन रूप कौन नेह कौन एक है सुभाव कहा आली कहिये । कौन माधुरी तरंग हाव भाव कौन रंग कौन सुख पानिप विलोकतही रहिये ॥ कोक कला रंगमई जोवन की जोति नई रही है विचारि मति उपमा न लहिये । हित ध्रुव ऐसो प्यारी मृदुताई वारि डारी रीझि पिय छुवत चरन नैन लहिये॥

छवि ठाढ़ी कर जोरें गुन कला चौंर ढोरें दुति सेवें तन गोरें रति वलि जाति है । उजराई कुंज ऐन सुथराई रची मैन चतुराई चितै नैन अतिहि लजाति है ॥ राग सुनि रागिनीहूं होत अनुराग वस मृदुताई अंगनि छुवत सकुचाति है । हित ध्रुव सुकुमारी पुतरीनहूं तें प्यारी जीवति देखें बिहारी सुख सरसाति है ॥ ३६ ॥

रूप नवला सी प्यारी नाना रंग के सु-
भाइ भावनि की मृदुताई कही न परति है ।
नैनन के आगे लाल लिये रहैं निस दिन एको
छिन मन तें न केहूं विसरति है ॥ भींजि भींजि
जाति पिय सुख के तरंगनि में जब प्रिया बातन
के रंग में ढरति है । हित ध्रुव प्यारे जू की जो-
वनि किशोरी गोरी छिन छिन प्रीतम के मन
कों हरति है ॥ ४० ॥

रूप नवला सी देखें स्वच्छ चपला सी प्यारी
परी खिसि नवल रँगीले जू के कर तें । हाव
भाव रंगनि के जगमगि रही प्यारी चित्र से ह्वै
रहे चितै चितै प्रेम भर तें ॥ अतिहीं विचित्र
सखी रही हैं सँभारि ध्रुव जिनि झुकि परैं धर
पर याही डर तें । छिन छिन प्रेम सिंधु के तरंग
नाना भाँति रह्यो थकि चकि मन तिहि रस
दर तें ॥ ४१ ॥

दोहा ।

अंग अंग तन तें कढ़ै रूप तेज की काँन्ति ।
चहुंदिसि थाम्हें रहैं सखि देखि लाल की भांति॥

कवित्त।

रूप की सी फुलवारी फूलि रही सुकुमारी अंग अंग नाना रंग नवल निहारहीं। नैन कर कमल अधर है बँधूक मानो दसन झलक पर कुन्द वारि डारहीं॥ बेंदी लाल है गुलाल नासिका सुवर्नफूल मोती बने जहाँ जहाँ जुही सी विचारहीं। छविही के खंजन रसील नैन प्रीतम के खेलैं तहां ध्रुव चितै सखी प्रान वारहीं॥

रूप वन प्यारी तन जोवन भयो है जहाँ सहज हरितताई पानिप अनंग री। दसन झलक भरैं छवि के सुरंग फूल मैन सुख फल मानो उरज उतंग री॥ अंग अंग माधुरी श्रवत मकरन्द मानों भुज रस वेलि नख पल्लव सुरंग री। हित ध्रुव तिहि मद्धि राजै नाभि सरवर क्रीड़ै तहाँ पिय मन मद को मतंग री॥ ४४॥

अलबेली सुकुमारी नैननि के आगे रहै तब लगि प्रीतम के प्रान रहैं तन में। यह जिय जानि प्यारी रंचको न होत न्यारी तिनहीं के प्रेम रंग

रँगो रही मन में ॥ परम प्रवीन गोरी हावभाव में किशोरी नये नये छवि के तरंग उठैं छिन में। हित ध्रुव प्रीतम के नैन मीन रस-लीन खेलिबो करत दिन रैन रूप बन में ॥ ४५ ॥

राधिका वल्लभलाल की प्यारी सखीनि की प्रान महा सुकुमारी। रूप की बेलि फली फल फूल मनोज उरोज भरे रस भारी। पत्र लावन्य हरे भरे रंगनि जोवन मौजनि पानिप न्यारी। प्रीतम नैननि चैन तऊ नहिं देखतहीं ध्रुव बाढ़े टखा री ॥ ४६ ॥

डीठिहूं की भार जानि देखत न डीठि भरि ऐसी सुकुमारी नैन प्रानहूं तें प्यारी है। माधुरी सहज कछु कहत न बनि आवै नेकहूं के चितवत चकित बिहारी है ॥ कौन भाँति मुख की अनूप कान्ति मरसात करत विचार तऊ जात न विचारी है। हित ध्रुव मन पर्यो रूप के भँवर मांझ नेह-बस भये सुधि देह की बिसारी है ॥

भींजी नवेली चँमेली फुलेल सों फूलनि के पट भूषन सोहैं। लोइन बङ्क विसाल सचिक्कन

अंजन की छवि प्राननि मोहैं ॥ रूप तरंगनि पानिप अंगनि प्यारी सखी ललितादिक जोहैं। भूलि रही ध्रुव तो छवि औ अरु मोहनी मैन की नारि धौं कोहैं ॥ ४८ ॥

कुंज तें निकसि दोऊ ठाढे जमुना के तीर आज सखी औरें भाँति प्रिया रंग भरी हैं। निसि के चिह्न चिते मुसकात रसनिधि बहु विधि सुख केलि रंग रस ढरी हैं॥ देखि ध्रुव छवि सींव मृदु भुज मेलि ग्रीव हँसी भोरी भोरी मृगी ठौर तें न टरी हैं। हरी हरी लाल लाल पीत सेत सारी तन पहिरें सहेली सबै चित्र की सी खरी हैं॥

नवल नवेली अलबेली सुकुमारी जू को रूप पिय प्राननि को सहज अहार री। विंजन सुभाइनि के नेह घृत सों जु बने रोचक रुचिर है अनूप अति चार री॥ नैननि की रसना सों त्रिपित न होत कहूं नई नई रुचि ध्रुव बाढ़त अपार री। पानिप को पानी प्याइ पान मुसकान खाइ राखि उर सेज खाइ पायो सुखसार री॥

प्रानहूँ तें प्यारी सुकुमारी जू के देखतही बिहारी के रोम रोम लोइन ह्वै जात हैं। ज्यौं ज्यौं रूप पान करें निमष न चैन धरें त्यौं त्यौं प्यास बाढै अति क्यौंहूं न अघात हैं॥ छवि की तरंगनि में झूलत किशोर पिय हार तन हेरिहेरि खड़े ललचात हैं। हित ध्रुव आरत मैं भयो भ्रम चाहहीं मिले हैं कि नाहीं मन केहूं न पत्यात हैं॥

रहे चकि लाल चिते मुख बाल पर्यो मन रूप तरंगनि माहीं। भाइ सुभाइ उठे छिनहीं छिन लालची नैन न केहूं अघाहीं॥ जोवन रंग भरे अँग अङ्ग विलास अनङ्ग कहे नहीं जाही। बानक आहि अनूप छबीली को पानिप की उपमा ध्रुव नाहीं॥ ५२॥

मुख छवि कांति सोहै उपमा कौं चन्द को है रहे माहि जोहि जोहि नवल रसिकवर। सीसफूल सोभा कछु कहत न बनि आवै मानहु सुहाग छत्र झलकत सीस पर॥ बेंदी लाल रही फबि कहा कहौं नथ छवि और सब रहे दबि जहां लगि

दुतिधर। हित ध्रुव नैननि में अंजन बिराजै खरौ पच्छल चपल मनमोहन को चितहर ॥ ५३ ॥

दोहा।

कुंवरि छबीली अमित छवि छिन २ औरै ओर।
रहि गे चितवत चित्र से परम रसिक सिरमौर॥

इति प्रथम संखलो सम्पूर्णम्।

अथ द्वितीय सं०—दोहा।

दुतिय संखला सुनतहीं श्रवननि अतिसुख होइ।
प्रेमरतन गुन रूप सों मानो राखे पोइ ॥ ५५ ॥

कवित्त।

दुलहिनि दूलह कुंवर दोऊ सहजहीं रसिक रँगीलेलाल भीजे रस रंगना। छवि के बसन अभरन अलबेलता के ठाढ़े हैं छबीलौ भाँति लतन के अंगना ॥ सहज सुरंग मृदु झलकें चरन कर रूप गुन पोइ बाँध्यो प्रेमही को कंगना। हित ध्रुव सहज हगञ्चलनि गाँठि परी नयो चाव नई रुचि बढ़त अनंगना ॥ ५६ ॥

जैसी अलबेली बाल तैसो अलबेलो लाल

दुहुनि में उलही सहज शोभा मेह की। चाहनि को अंबु दै दै सींचत हैं छिन छिन आलबाल भई सेज छाया कुंज गेह की ॥ अनुदिन हरी होत पानिप बदन-जोति ज्यों ज्यों बबछार ध्रुव लागै रूप मेह को। नैननि किवारि किये हेरें सखी मन दियें चित्र सी ह्वै रहीं सब भूलीं सुधि देह की ॥ ५७ ॥

प्यारेजी को जीवनि है नवल किशोरी गोरी तिहि भाँति प्याराजी को जीवनी बिहारी है। जोई जोई भावे उन्हें सोई सोई रुचै इन्हें एक गति भई ऐसी रंचकों न न्यारी है ॥ छिन छिन देखि देखि छवि के तरंग नाना प्रीतम दुहुनि सुधि देह की बिसारी है। हित ध्रुव रीझि रीझि रहे रूप रस भींजि ऐसी अब लगी प्रीति सुनी ना निहारी है ॥ ५८ ॥

प्रीतम की प्रेम-गति देखें भूली तन-गति बड़े बड़े नैन दोऊ आये प्रेमजल भरि। प्रिया लाल लाल कहि लिये लाइ उरजनि चूमि चूमि नैना

रही अधर दसनि धरि ॥ हित ध्रुव सखी सब देखत बिवस भईं प्रेम-पट नाना रंग झलकें सबनि परि। एक चित्र कीसी खरी एक खसि धर परी एकनि के नैननि तें गिरे नेह-नीर ढरि ॥

नैननि के आगे प्यारी बिलपत हैं बिहारी अँसुवनि प्रेमजलधारा चली जाइ री। कौन प्रेम जिहि फन्द परे हैं रँगीलेलाल अटपटी गति देखें हियो अकुलाइ री ॥ हित ध्रुव चेति कें किशोरी गोरी धीर धरि नैना नेह नीर भरि लीने उर लाइ री। प्रेम को समुद्र फिरि गयो है सबनि पर जहाँ तहाँ सखी धर परीं मुरझाइ री ॥६०॥

सवैया।

सेज सरोवर राजत है जल मादक रूप भरें तरुनाई। अंगनि आभा तरंग उठैं तहाँ मीन कटाछनि की चपलाई ॥ प्यासी सखी भरि अंजुल नैन पिये तें गिरी उपमा ध्रुव पाई। प्रेम गयन्दनि डारे हैं तोरि के कञ्चन कञ्ज चहूं दिस माई ॥ ६१ ॥

कवित्त ।

सखिनि की गति हेरें ठाढ़े भये जाइ नेरें क-
रुना कै चितयौ दुहुनि बिन आर री। अमी की
सी धारा उर सींच गये सबनि कैं प्रेम सिन्धु भोर
तें निकासी बरजोर री ॥ चहूं दिसि राजै खरौ
महा रस रंगभरौ नैननि को गति बहै तृषित
चकोर री । सहज तरग उठैं जल कै से छिन
छिन हित ध्रुव यहै खेल तहाँ निसि भोर री ॥

नई सेज नई रुचि नयौ रूप नयौ नेह नेही
नये अलबेले अति सुकुमार री । नई लाज नयौ
रंग नई केलि कों सिंगार पानिप अनङ्ग चढ़ैं
सोहै उर हार री ॥ छिन छिन तृषा बढ़ै नेह
रँगी चितवनि मधुर बिमल निज यहै प्रेम सार
री । हित ध्रुव प्यारी मानो कुई है न मनहूं कैं
एक रस दिन जहाँ विसद विहार री ॥६३॥

सेज रँगीला रँगीली सखीन रची बहु रंग
सुरंग सुहाई । तापर बैठे रँगीले छबीले हँसे रस
में सुखमा सरसाई ॥ चिक्कन अजन नैन लसें

मेंहदी झलकैं पद पान रचाई । रूप की दीपति तें ध्रुव कुंज फनूस सौ ह्वै रहीयौं उर आई ॥६४॥

फूल सौं फूलनि ऐन रची सुख सैन सुदेस सुरंग सुहाई । लाड़िली लाल विलास की रासि सौ पानिप रूप बढ़ो अधिकाई ॥ सखी चहूं ओर विलोकें झरोखनि जात नहीं उपमा ध्रुव गाई । खञ्जन कोटि जुरे छवि के हैं नैननि कि नवकुंज बनाई ॥ ६५ ॥

दोहा ।

नवल रँगीली कुंज में नवल रँगीले लाल ।
खिल रँगीली नव रच्यौ चितवनि नैन विसाल ॥

कवित्त ।

फूलनि को कुंज ऐन फूलनि की रची सैन फूलनि के भूषन वसन फूल मन में । फूलही की चितवनि मुसकनि फूलही की फूल फूल लपटात फूल के सदन में ॥ फूलनि के हावभाव फूलनि को बढ्यो चाव फूले फूल देखि ध्रुव उभै तन बन में । बरषत सुख फूल ताकी उपमा यों लसै फूलही को दामिनो लसति फूल घन में ॥६७॥

छवि सों छबीले आछे बैठे हैं छबीली भाँति रतन निकुंज माहिं बातें रति करहीं। परम प्रवीन प्यारी ताहू ते अधिक प्यारी रस भरि चितवनि चितै चित हरहीं॥ नवल नवल भाइ बेध्यो है मरम जाइ आनँद कौ रंग पाइ सुख रस ढरहीं। हित ध्रुव रीझि रीझि देवे कों न कछू आहि फिरि फिरि प्यारीलाल पाइनि में परहीं॥

लाल पीत फूलनि की कुंज सुखपुंज मद्धि लाल पीत बागे तन दोऊ लाल पहिरें। भूषन की दुति प्रति अंगनि में झलकति मानों रूप सिंधुनि तें उठति हैं लहरें॥ मन्द मन्द हँसि कहैं कछु रंग-भीनी बात बेसरि के मोती दोऊ छवि सों थरहरें। हित ध्रुव रीझि रीझि रहे रसरति भीजि अंचलनि सुधि भूली परे सुख गहरें॥

प्रीतम किशोर गोरी रसिक रँगीली जोरी प्रेमही के रंग बोरी सोभा कही जात हैं। एक प्रान एक वेस एकही सुभाव चाव एक बात दुहुनि के मननि सुहात हैं॥ एक कुंज एक सेज

एक पट ओढ़े बैठें एक एक बीरी खण्ड दोऊ मिलि खात हैं। एक रस एक प्रान एक दृष्टि हित ध्रुव हेरि हेरि बढ़े चोप केहूं न अघात हैं॥

साँवरे किशोरलाल लाड़िली किशोरी गोरी बाँहाँ जोरी एक संग नीके देखि पाए हैं। कञ्चन के कञ्जनि को कुञ्जनि में बैठ सखी बीतो रति-केलि निसि तऊ न अघाए हैं॥ हारनि के व्याज पिय छुयौ चाहै उरजनि प्रिया जानि अञ्चल सों तबहीं दुराए हैं। हित ध्रुव परम प्रवीन कोक अंगनि मैं समुझि समुझि मन दोऊ मुसकाए हैं॥

बैठे सेज एक संग भींजे रस अंग अंग मन के मनोज रंग मुदित करत हैं। अधिक अधीर-ताई देखें प्रिया मुसकाई विवस किशोर पिय अंक में भरत हैं॥ चितै चितै नैन ओर छुवै लाल कुच ओर भौंहनि की मुरनि तें अतिहीं डरत हैं। हित ध्रुव ललित कपोल नासा पुट चूमि अधरनि रस हित पाइनि परत हैं॥७२॥

दुलहिनि दूलह किशोर एक जोर दोऊ भूषन

सुहाने बागे बने अंग अंग री। चञ्चल नैना वि-
साल अंजन फबि है रसाल कर पद रचे सोहैं
मेंहदी के रंग री सहज सुहानी कुंज रची है
सुहानी सेज लिये लाल बैठे हैं लड़ैती को उ-
छंग री। हित ध्रुव छिन छिन बढ़त सुहानो नेह
रोम रोम उपजत छवि के तरंग री ॥७३॥

नवल निकुंज सुखपुंज में रँगीले लला दुल-
हिनि दूलह रसिक सिरमौर री। रति रसरंग
साने ऐसे अंग लपटाने परत न सुधि कछु को है
स्याम गौर री॥ महा रस माधुरी कौं पीवत हैं
ज्यों ज्यों दोऊ बढ़त अधिक आली त्यों त्यों प्यास
और री। हित ध्रुव हेरि हेरि करत विचार सखी
कौन प्रेम कौन रूप जुर्यो एक ठौर री ॥७४॥

रूपनिधि पानिप तरंगनि के चितवत मैन-
रंग भरे नैन सोभित विसाल री। आनँद की
कुञ्ज ऐन राजत है प्रेम सैन तापर रँगीले जग-
मगे दोऊ लाल री॥ माधुरी मदन मद मोद के
विनोद करैं लालच की रासि ललचात सब काल

री। हावभाव चतुरई छिन छिन नई नई हित ध्रुव रस बस कीने वर बाल री॥ ७५॥

सवैया।

आनँद पुंज सुहाग की कुंज में सेज सुदेस सुरंग सुहानी। लै लै ध्रुव फूल अनूप दुकूल रची सुख-मूल सुगन्ध सों सानी॥ दूलह दोउ विचित्र महा कलही कल कोककला कल ठानी। परे रसरंग अनंग तरंग भई लव रैनि विहात न जानी॥

दोहा।

अद्भुत कोककलानि की प्रेम रँगीली केलि।
हार जीत तहँ होत नहिँ बढ़त रहै रुचि बेलि॥

कवित्त।

माधुरी की कुंज तामें मोद की लै सेज रचौ तिहि पर राजैं अलबेले सुकुमार री। रूप तेज मोद के जुगल तन जगमगैं हावभाव चातुरी के भूषन सुढार री॥ नेह नीर नैननि की सैननि में रहे भींजि कौन रंग बाढ्यौ जहाँ बोलिबौं उभार री। अतिहीं आसक्त सखी रहीं मोहि जोहि जोहि हित ध्रुव प्राननि कौ इहई अहार री॥

कमल की कुंज में गुलाबदल सेज रची बागे कौलपत्र मृदु अतिहीं सुरंग री। अंग अंग रहे भींजि सोंधेही के मोद माहिँ है है लर मोतिन की फोंदा बने संग री॥ कौलपत्र वारि डारे नेन अरुनाई पर चपलाई पर फीके खंजन कुरंग री॥ फूले मुख देखि सखी रहि गई न्यारी न्यारी छकी अनुराग ध्रुव सबके अभंग री॥ ७६॥

फूलनि में फूल दोऊ संग सखी नाहिं कोऊ रंग-भींजी बतियनि कहि मुसकात री। आनँद के सिंधु परे नेन मैन रंगभरे हित ध्रुव रस ढरे उर भपटात री॥ अधर अधर जोरें मिलि रही नैन कोरें थोरे थोरे बेसरि के मोती थहरात री। चली है उमड़ि सोभा बाढ़ी रतिपति गोभा देखि लाल लालचहिँ लालचौ लजात री॥८०॥

लाल कुंज लाल सेज लाल बागे रहे बनि राजति हैं दोऊ लाल बातनि के रंग में। लाल नीकी लाल भूमि लाल फूल रहे भूमि ललित लड़ेती लाल फूले अंग अंग में॥ लालैलाल सारी

तन पहिरैं सहेली सबै भींजे दोऊ प्रानप्यारे प्रेमही के रंग में। हित ध्रुव चितवत लोइन सिरात तब देखैं जब प्यारी जू कौं पिय की उछंग में॥

जहां जहां राधा प्यारी धरत चरन पिय तहां तहां नैननि के पाँवड़े बनावहीं। महा प्रेम रंग रँगे तिनहीं के प्यार पगे सेवा सब अंगनि की करे सचु पावहीं॥ मादक मधुर पिय प्यारी कौं सुभाव लिये छिन छिन भाँति भाँति लाड़नि लड़ावहीं। तैसियै प्रबीन प्यारी हित ध्रुव सुकुमारी समुझि सनेह रस कण्ठ सों लगावहीं॥

नेह रँगी मद मैन छकी पिय छाती लगी सुचितै मुख ओरी। गुनरासि किशोरी सुखाकर गोरी सुकोककलानि के सिंधु झकोरी॥ रंग तरंग अनंग अभंग बढ़ै छिनही छिन प्रीति न थोरी। सखी हित की नित की चित की ध्रुव सो मुख पीवत हैं निसि भोरी॥ ८३॥

छिन छिन नई छवि पानिप में रही फबि राधिका रसिकलाल पर प्रान वारिये। अंगनि

झलक अरु भूषन झमक आली देखत रँगीली भाँति पलकें न टारिये ॥ रंगभरी करें बात बीचि बीचि मुसकात चाहन चपल चितै मोही सखी सारिये । प्रेम की अनूप गति भूली तहाँ ध्रुव-मति तन मन धन बुधि सबै बात हारिये ॥८४॥

सुमिल सुठौंन अंग झलकत मैन रंग पानिप झलक बहुभाँति झलकात हैं। हावभाव माधुरी की मूरति रँगीली जोर कानन लों नैन कोर रंगही चुचात हैं ॥ फूले द्रुमतर ठाढ़े प्रेम के सु रंग बाढ़े हित ध्रुव मन्द मन्द दोऊ मुसकात हैं। छबि की झलक मानों उछरि उछरि परै ऐसे रूप आली कही कैसे कहि जात हैं ॥ ८५ ॥

केसरी सुरङ्ग इकरंग बागे दुहुनि के जमुना के कूल कूल बाहँजोरी आवहीं । सखिनि के जूथ जूथ आवत हैं पाछे पाछे हित की निकट सखी संग लागी गावहीं ॥ कहूं कहूं ठाढ़े होइ देखत सुफूल छबि मन भाए रँग लै लै प्रियहिं बनावहीं । अति अलबेली भाँति फिरैं अलबेले

दोऊ करत विनोद ध्रुव जो जो मन भावहीं॥८६॥
जमुना के कूल कूल जहाँ जहाँ फूले फूल बाँहाँजोरी लटकत आवत हैं भोरहीं । सघन लतनि माँहि फूले फिरें रंग-भरे कहूं कहूं ठाढ़े होइ फूलनि कों तोरहीं ॥ थोरी सखी संग हतीं सोऊ न्यारी ह्वैकें रही हित ध्रुव देखि छबि पलकैं न जोरहीं। प्रेमरस राते माते छिनहूं न होत हाँते ऐसे मन मिलि रहे चले एक ओरहीं ॥ ८७ ॥

दोहा ।

एक प्रान मन एकही एक प्रेम को चाव ।
एकै सील सुभाउ मृदु सहजहि बन्यौ बनाव ॥

कवित्त ।

प्यारी कै जँगाली बागौ लाल कै गुलालो आली फबि रहे जैसे मोपै कहत न आवई । मृगमद बेंदी इते बनी है सुरङ्ग उत हारि रह्यो मन कछु उपमा न पावई ॥ कुँवरि कै नथ सोहै बेसरि विहारी जू के कौन एक छवि बाढ़ी देखिबोई भावई । झलकत मोती लरें कुन्दन की माल गरें मुसकनि मन्द ध्रुव सुख बरषावई ॥८९॥

अङ्ग भरि पट भरि भूषन भवन भरि चल्यौ है उमड़ि छबि अम्बु चहूं ओर री। सखिनि के नैन मीन परें हैं तरङ्गनि में जानत न कहाँ होत आली निसि भोर री॥ बृन्दाबन कुञ्ज कुञ्ज रह्यौ पूरि सुखपुञ्ज हंस अरु मृग मोर भए हैं चकोर री। हित ध्रुव एकरस रस के समुद्र दोऊ नागरि अनङ्ग केलि नवलकिशोर री॥ ८० ॥

एक सङ्ग चलैं दोऊ एकै ओर ध्यान दीनै एकै छोर कीनै सबै निज तन मन कौं एक बैस एक जोर एक से अभूषन पट एक सी छबीली छबि छाजत है तन कौं॥ रूपही के रंग भीने लोइन चकोर कीने एकै संग चाहैं ऐसे जैसे मोन बन कौं। हित ध्रुव रसिक किशोर या जुगल बिनु आली को निबाहै रस ऐसे प्रेमपन कौं॥८१॥

रूप की अवधि दोऊ उपमा कौं नाहि कोऊ प्रेम-सीव सुकुमार एकै रंग रँगे हैं। सहज अटक जहाँ बिना हित हित तहाँ उज्जल अनूप रस दोऊ मन पगे हैं॥ मदन कुसुम मोद रसि रह्यौ

दुहूं कोद अंग अंग रोम रोम भाइ जगमगे हैं। हित ध्रुव हेरि हेरि छविरस भये बस तृपित न नेक क्योंहूं रैनि सब जगे हैं ॥९२॥

ज्यौं ज्यौं लाल देखैं मुख नैननि कों तृषा होत प्यारीजी को रूप मानो प्यासही को रूप है। डीठि डीठि रही मिलि जैसे एक धारा ध्रुव होंहूं भूली देखि छवि अतिही अनूप है ॥ कौन रस स्वाद गह्यौ कैसेहूं न जात कह्यौ जानत न छाँह घरु कैसो होत धूप है। और सुख जैसे सब भये हैं पतङ्ग रसराज के सुखनि पर प्रेम-भान भूप है ॥

रसिक रँगीलो लाल सुकुमारी प्यारीजू कौ मनहूं के करन सों छूवत डरत हैं। प्रेम नवला सी प्यारी सहजहि सुकुवारी प्राननि की छाया तिन ऊपरे करत हैं ॥ नेकही की हाँसी सखी सार है बिलासनि को जाके हेरें और सब सुख बिसरत हैं। अतिही असक्त ताको हित ध्रुव यहै गति रीझि रीझि दूरिही तें पाँयनि परत हैं॥९४॥

हेरि हेरि रूपहिँ चकित होइ रहै दोऊ प्रेम

कौ न वारापार कैसे कै बखानिये। मन मन चतु-
राई तन सुधि बिसराई कौन एक रस बाढ्यौ
जानत न जानिये॥ और कौ प्रवेस कहाँ मनहूं
न भेदौ जहाँ ऐसो प्रेम छटा ताहि काहि लै प्रमा-
निये। हित ध्रुव जोई कछू कहिबौ है ऐसो भाँति
जैसे आली पाहन सौं मानिक लै भानिये॥९५॥

दोहा।

कहिबौ सुनिबौ रहि गयौ देखत मोहन रूप।
अद्भुत कौतुक सौं रँगे प्रेम बिलास अनूप॥९६॥

इति द्वितीय।

अथ तृतीय।

कवित्त।

अब सुनि तीजी शृङ्खला रतिविलास आनन्द।
तिहि रसमादक मत रहैं श्रीवृन्दाबनचन्द॥९७॥

सवैया।

भाँति भली नवकुञ्जनि राजत राधिका बल्लभ
लाल बिहारी। प्राननि कौ मनि प्यारी बिहारिनि
प्यार सौं प्रीतम लै उर धारी॥ मनों छबि च-

न्द्रिका चन्द्र के अङ्क में बाढ़ी महाछबि की उँ-जियारी। सखी चहुंकोद चकोरी भईं ध्रुव पीवत रूप अनूप सुधारी ॥ ९८ ॥

केलि करैं सुकुमारी बिहारी बढ़ी छबि भारी कही नहि जाई । लालची लाल रँगे रस बाल बिलोकि रहे ध्रुव सुन्दरताई ॥ पीवत नैन कटाछिनि माधुरी कौतुक एक न केहूं अघाई । हितैहित हेरि लुभाइ रहे रुचि कौं रुचि देखि कै आप लजाई ॥ ९९ ॥

भाँति रँगीली छबीली के संग छबीलो बन्यो छबि की निधि माई । सेज सुहानी सुरंग बनी तिहि ऊपर केलि करैं सुखदाई ॥ हिय सौं हिय लाइ रहे लपटाइ लसैं अँग अंग में अंगनि झाँई । मिली ध्रुव द्वै सरिता छबि की मनौं डीठि तहाँ न कहूं ठहराई ॥ १०० ॥

लाड़िली लाल बिलास करैं रचि सेज सुदेस सुरंग सुहाई । मन्दहि मन्द हँसैं रसमत्त भरे अनुराग महाछबि पाई ॥ कोंक कलानि की

घातनि माहि विचित्र विनोद बढ़ावत माई। सखी चहुंकोद लतानि लगी निरखैं ध्रुव प्रानि देत बधाई ॥ १०१ ॥

सवैया।

गोरी किशोरी की अंगनि कांति लसै बहु भाँति न जात बखानी। रंग को रास रच्यो रति रास विलास की औधि निकुञ्ज निरानी॥ अंसनि बांहु जुरी ध्रुवमण्डली नैननि निर्त्तत रैनि बिहानी। अञ्चल चोर करैं श्रमु जानि कै भूषन अंग तेई भए गानी ॥ १०२ ॥

कवित्त।

मदन के रस में मगन विहार करैं सुख के प्रवाह माहिँ लाल मन भीनो है। श्रमजलकन मुख छवि के समूह मानो नैन बैन सैन सर पञ्जर सों कीनो है॥ कहा लों सम्हारैं पिय परे सेज बस भार लटकत सीस गहि लाइ उर लीनो है। हित ध्रुव परम प्रवीन सब अङ्गनि मैं अधर अधर जोरि सुधारस दीनो है ॥ १०३ ॥

सरस विलास सानै अंग अंग लपटाने आरस में अरसाने नैना न अघाने हैं। जब जब छूटि जात फिरि फिरि लपटात छाड़ि न सकत सेज ऐसे ललचाने हैं ॥ उठिवे को मन करैं पुनि तिहि रंग ढरैं घरी एक और जाउ कहि मुसकाने हैं। हित ध्रुव ऐसी भाँति छिन छिन सरसाति जानत न रैनि दिन केतिक बिहाने हैं ॥

भोर कुंज द्वार खड़े अंग अंग रंग भरे अरुनाई नैननि की बरनो न जाति है। अंजन अधर लीक फबी है कपोल पीक वसन पलटि परे सोभा झलकाति है ॥ रेसम सो अलबेलो लटको है लाल भर मुद्री को आरसो निरखि मुसकाति है। हित ध्रुव ऐसी छवि देखतहीं रीझि रहे प्रीतम की अँखिया तौ कैहूं न अघाति है ॥ १०५ ॥

सवैया।

आजु की बानिक लाल रँगीले की मोपै कछू नहिं जाति बखानी। लाड़िली रंगभरी सुकुमारि

रही लपटाइ हिये अरसानी ॥ रहे छुटि बार न हार सँभार बिहार-बिनोद में रैनि बिहानी । रूप बिलास सनेह निहारि सखी हित बारि पिवै ध्रुव पानी ॥ १०६ ॥

कवित्त ।

भोर भये साँझही को धोखो है दुहुनि मन सुपनो सों चित्त करैं कहा बात है भई । ऐं कि हम मिले नाहिं बैठे हैं अबहिं आइ ऐं कि निसा आजु कहूं बीचही तें है गई ॥ भूषन बसन छूटे देखि पुनि समुझत कौन एक भ्रम दसा उपजी है सुखमई । हित ध्रुव यहै जानै मिल्यो अनमिल्यो मानें नैननि में रुचिही की प्रेमबेलि है बई ॥

नवल रँगीले दोऊ रस में रसीले अति सहज सुरङ्ग नये नेह अनुरागे हैं । देखि देखि प्यारी अनदेखी सो लगत मन निमिषौ न लागे नैन रैनि सब जागे हैं ॥ चाह भूली चाहि चाहि य-दपि लड़ैती पाहि ऐसे प्रेमरङ्ग रस मोद मद पागे हैं । तिहि सुख की निकाई ध्रुव पै कही न जाई दृपित न आई उर उरजनि लागे हैं ॥१०८॥

आदि न अन्त विलास करैं दोउ लाल प्रिया में भई न चिन्हारी। नई नई भाँति नई छवि कांति नई नवला नव नेह विहारी॥ रहे मुख चाहि दिये चित आहि परे रस प्रीति सु सर्वसु हारी। रहैं इक पास करैं मृदु हाँसि सुनो ध्रुव प्रेम अकत्थ कथा री॥ १०६॥

दोहा।

नवल कुँवर दोउ रसिक मनि उपमा दीजै कौन।
चितै चितै मुख माधुरी ह्वै रहियै ध्रुव मौन॥

सवैया।

पान सुरंग फबी है छबीली के भाँति छबीली सखीन बनाई। पर्यो मन लाल को प्रेम के पेंच में देखत पेच रहे हैं लुभाई॥ बेंदी जड़ाऊ की भाल दिये अरु नैननि अञ्जन रेख सुहाई। तैसोई नत्थ को मोती बन्यो छवि छाइ रही न कही ध्रुव जाई॥ १११॥

चूनरी लाल सुरंग छबीली की ओढ़े छबीली महा छवि पाई। कच गूंथि सुदेस रची रचि

माँग ऽरु नैनन अंजन रेख बनाई ॥ बेंदी दई हँसि लाड़िली रंग सों बेसरि ले अपनी पहराई। रूप चढ्यौ मदमोद बढ्यौ भ्रुव देखत नैन निमेष भुलाई ॥ ११२ ॥

पाग जँगाली फवी है किशोरी के केसरि रंग किशोर के माई । बेंदी मृगम्मद सोहै इते उत लाल रमाल अनूप बनाई ॥ बेसरि नत्थ बनी झलकैं भ्रुव खोजि रह्यो उपमा नहिं पाई । रूप तरंग चितै मनमोद सखी चहुंकोद रही है लुभाई॥

चूनरी लाल बनो है बिहारी के पाग बिहारिनि के सिर सोहै । छके नव नेह महारस मेंह छके सखि आइ जोई छिन जोहै ॥ बेसरि पीय के नत्थ सुतीय के पानिप रूप अनूपम मोहै । भाँति रँगीली कही न परै सखि या छवि की उपमा कहो को है ॥ ११४ ॥

कवित्त ।

प्यारीजी की सारी अति प्यारी लागै प्रीतम कौं सोंधे भींजी अँगिया सुरंग उर धारी है । नवल रँगीली जू के भूषन बिहारीलाल, पहिरत

बाढ़ी फूल जात न सँभारी है ॥ जोई कछु प्रिया जू के अंगनि परस होत सोई प्रान जात हाति ऐसी प्यारी प्यारी है। हित ध्रुव प्रेम-बात कैसहूं कही न जात जानें सोई जिहिँ सिर मोहनी सी डारी है ॥ ११५ ॥

उज्जल स्याम सुरंग सुहावनी लाज भरी अँखियाँ अति सोहैं। प्रेम भरी रस भाइ भरी ध्रुव प्यार भरी पिय की दिसि जोहै ॥ बढ्यौ अनुराग सुरंग सुहाग सबै अँग प्रीतम प्रानिनि मोहै। नई छवि छोन प्रवीन बिहारिनि खंजन मीन कुरंगनि को है ॥ ११६ ॥

खेलत बसन्त होरी नवल छबीली जोरी उड़त गुलाल अनुराग की सुरंग री। मृदु मुसुकानि उर फूल येई फूल भये हावभाव सोंधे भींजि सोहैं अंग अंग री ॥ नैनन की चितवनि छिरकनि प्रेम नीर सींचे हैं पिय हिय भरी रसरंग री। हित ध्रुव भींजि सुख बारिध बिलास हास सोई सुख देखैं सखि दिनहीं अभंग री ॥ ११७ ॥

सवैया।

खेलत फाग भरे अनुराग सौं लाड़िली लाल महा अनुरागी। तैसियै संग सखी सुठि सोहनी प्रेम सुरंग सुधारस पागी॥ चलै पिचकारी चितौन छबीली की प्रीतम के उर अन्तर लागी। रंग को ओर न छोर सनेह को देखि सबै उपमा ध्रुव भागी॥ ११ ॥

सखिन के मण्डल मध्य जु खेलत रंग बिहारिनि संग बिहारी। लै लै नव कुंकुम रंगनि छोड़त बन्दन डारत नैन सँभारी॥ परैं तहँ बूंद जहाँ जहँ चाहियै ऐसे प्रवीन सिँगार सिँगारी। बढ्यौ ध्रुव रंग अनंग तरंग सनेह की रासि रही हैं निहारी॥ ११९ ॥

लाड़िली लाल निकुंज में खेलत आनँद प्रेम विलास की होरी। अँखियौ पिचकारी भरी ध्रुव प्यार सौं छोड़त प्यार सौं प्रीतम गोरी॥ मैन को खेल बढ्यौ सुख पुंज बजै धुनि भूषन की थोरि थोरी। भयौ छवि को छिरकाव मनो जब साँवरे ओर हँसे मुख मोरी॥ १२० ॥

हँसि जात विमल नीर सुन्दर सुदेस तीर निर्तत मयूरी मोर आनँद अधीर री। कमल निकुंज कुंज मधुपनि होत गुंज वरषत सुख पुंज रटैं पीक कीर री ॥ खेलैं तहाँ रस रासि विविधि विनोद हाँसि सुरँगित भये भुव अंगनि के चीर री। डारत बंदन प्यारी छिरकैं बिहारीलाल रंगन की बूंदैं बनी सुभग सरीर री ॥१२१॥

सोरठा।

खेलत कामिनि कन्त, भीने रँग अनुराग में।
अद्भुत रास वसन्त, तहँ छबिहू भूली फिरैं ॥१२२॥

खेलत रास दोऊ रस रासि विचित्र सुगन्ध कलानि में माई। नई नई भांति नई गति लेत हैं निर्तहुँ रीझि तहां बलि जाई॥ कंचन मण्डल में प्रतिबिम्बित अंगनि रूप तरंगनि झांई। मनो ध्रुवचन्द उभै छवि धुनि ऊपर निर्तत यों उर आई ॥ १२३ ॥

खेलैं मनो अनुराग के बाग में बाहुलता छवि अंसनि दीने। चहूँदिसि राजैं सखीन के बृन्द

विचित्र बनाइ सिंगारहि कीने ॥ सारी सुही सब एकहि रंग फबी पहिरैं कर कंजनि लीने । मझि किशोर किशोरी बन दोउ रूप सने ध्रुव रंग में भीने ॥ १२४ ॥

कवित्त ।

माधुरी तरंग रंग उपजत छिन छिन रोम रोम प्रति सोभा रही है लुभाइ कैं । फूलनि कौं छाड़ि छाड़ि आवत मधुप धाइ तन की सुवास अति रही बन छाइ कैं ॥ रूप को अनूप काँति कैसहूँ न कही जाति नख आभा पर चन्द गयो है लजाइ कैं । हित ध्रुव पिय मन यहै सोच रहै दिन ऐसी सुकुमारी को देखौ न अघाइ कैं ॥

प्यारीजू की भौंहन को सहज मरोर मांझ गयो है मरोरी मनमोहन को माई री । ऐसे प्रेम रस लीन तिलहूं में भये छीन जैसे जल बिन कंज रहै मुरझाई री ॥ धीरज न नेक धरैं नैना नेह नीर ढरैं बिवस पगनि और ढरयो सीस जाई री । व्याकुल बिहारीलाल चितै अङ्क भरे लाल पाये प्रान तब ध्रुव जब मुसकाई री ॥ १२५ ॥

नागरी नवल गुन सीव सब अंगनि में तेई भाइ जानिवे कों नागर प्रवीन हैं। रूप अरु जोबन की जैसी है गरुताई तैसे इत रसिक सिरोमनि अधीन हैं॥ नेकु मुरि बैठे जब व्याकुल ह्वै जात तब सहजहीं गति ऐसी जैसें जल मीन हैं। रंच हँसि चाहतही रोम रोम होत फूल हित ध्रुव नेह जहां सदाही नवीन हैं॥ १२७॥

प्रेम के तरंगनि में प्यारी जू कौ मन पर्‍यौ कछुक रुखाई छवि औरै भाँति भई है। मान पिय मान लियौ हियौ गहबर दियौ दीरघ उसास लेत भूलि सुधि गई है॥ प्रानप्यारे लाल जू की गति हेरि हेरि तनु उर सो रही है लागि आखें भरि लई है। हित ध्रुव दुहुनि कौ प्रेम कैसें कह्यौ जात जानत हैं वेई छिन छिन प्रीति नई है॥ १२८॥

जौलौं प्यारी बतराति चितै चितै मुसकाति पिय हिय लपटाति त्योंही लगि शाँति है। प्रेम नेम में प्रवीन याही रस भये लीन जैसें जल माहिँ

मीन पख्यो ऐसी भांति है ॥ रुचिही की बेलि नई नैननि में आनि बई बाढ़त है रसमई फैली अति जाति है। आनँद के फूल ताहि लागे अनु- राग पागे छिन छिन डहडहै औरै ध्रुव कांति है॥

जहाँ जहाँ पगु धरैं माधौ कौ मन हरैं रूप गुन पीछे फिरैं ऐसे सुकुमार री। हावभाव सिंधु के तरंग उठैं अंग अंग नेकही की चितवनि मोहै कोटि मार री॥ छिन छिन नई नई पानिप अ- नूप कांति देखें तन झलकनि रहै न सँभार री। हित ध्रुव चितचोर नवल रँगीलौ जोर निसिदिन सखियन कीने उर हार री॥ १३०॥

सवैया।

लाड़िली रंग भरी सुकुमारि सिंगार सलौन अनूप कह्या है। रैनि बढ्यो ध्रुव रंग को खेल महा सुख में रससिंधु तख्यो है॥ रहे छुटि बार टूटी लर लार सुअंग को अंगनि रंग ढख्यो है। मैन रची फुलवारी में मानहु प्रेम को वारन आनि पख्यो है॥ १३१॥

सोरठा।

फूल सों जब मुसकाति चितै लाड़िली लाल तन।
को बरनें वह भाँति प्रीतम हू रहे भूलि जहँ ॥

सवैया।

मैन की बेलि बढ़ी प्रिय हयी में फूल मनोरथ बाढ़े अपारा । एकहि रंग सुरंग रहे दिन सींच्यौ करें रस प्रेम की धारा ॥ रीझि के चाहि रहीं सुकुमारी बिहारी किये अपने उर हारा । देखतहीं ध्रुव या छवि कौं सिर नाइ लजाइ गये सत मारा ॥ १३३ ॥

कवित्त।

नवल नवेली हेली अलबेली भाँति दोऊ रस-केलि सहजहीं रंग भरे करहीं । बदन बदन जोरें मिलि रही नैन कोरें थोरे थोरे बेसरि के मोती थरहरहीं ॥ आरस में अरसानी छवि न परे बखानी प्यार सों लटकि प्यारे पिय पर ढरहीं । हित ध्रुव सखिन की जीवनि है यहै सुख रुख लिये दुहुनि कौं मन अनुसरहीं ॥ १३४ ॥

सवैया ।

कही न परै मुख की छवि पानिप राजति आजु रँगीली बिहारिनि । भूलि रहे बिसरी सुधि देह की मैन मनोरथ बाढ़े अपारिनि ॥ मोह के सिन्धु परे मनमोहन हेरत नेह नवेली निहा-रिनि । लिये ध्रुव हेत सों लाइ हिये पिय देखि सखी सुकुमारि सँहारिनि ॥ १३५ ॥

कवित्त ।

प्रेम के खिलौना दोऊ खेलत हैं प्रेम खेल प्रेम फूल फूलनि सों प्रेम सेज रची है । प्रेमही की चितवनि मुसकनि प्रेमही की प्रेम रँगी बातें करैं प्रेमकेलि मची है ॥ प्रेम के तरंगनि में प्री-तम परे हैं दोऊ प्रेम प्यार भार प्यारी पिय हिय लची है । हित ध्रुव प्रेमभरी प्यारी सखी देखि खरी हित चितवनि छवि आनि उर सची है ॥

प्यारी जू की उनिहारि पिय के अहार यहै हियेहू की हार छिन चित ते न टारहीं । अंग की सुवास पर भ्रमत भँवर मानो लोइन छबीलो

जू को छबिहि निहारहीं ॥ पल पल पानिप त-
रंग रंग औरै और माधुरी सुभाइनि की अमित
अपारहीं । हित ध्रुव प्रेमरस विवस रहत दिन
चितै चितै मुख ओर प्राननि को वारहीं॥१३७॥

आजु को छबीली छवि छटा चित वँधि रही
कही नहिँ जाति कछू कौन गति भई है। नवल
जुगल हँसि चितवति ठाढ़ी पासि मानों तिहि
उर नई नेह वेलि बई है ॥ हित ध्रुव नीरज से
नीर भरे ढरे नैन बोलत न कछू बैन चित्र सी
ह्वै गई है। नैन छाइ लीने रूप परी तब प्रेम-
कूप वाकी गति जानें सोई जिहि अनभई है ॥

आलिन के मनो प्रान की मूरति लाड़िली
लाल बनाइ सवारे । जीवति है सब देखि दुहून
कों राखति ज्यों अँखियानि में तारे ॥ खान औ
पान विलास विनोद अहार यहै तिनिके सुख
सारे । रूप विलास सनेह की सींव निहारि रही
ध्रुव नैनन टारे ॥ १३९॥

रूप की रासि किशोर किशोरी रँगे रसकेलि

निकुंज विहारा । मातै अनंग प्रवीन सबै अँग फूल सिरीसहु ते सुकुमारा ॥ बसौ उर नैननि में दिन रैनि नसौ मन के जिते आहिँ विकारा । जाँचत बात न और कछू ध्रुव देहु प्रिये रसप्रेम की धारा ॥ १४० ॥

सहज सुभाव पर्यौ नवल किशोरी जू को मृदुता दयालुता कृपालुता की रासि है । नेकहूं न रिस कहूं भुलेहूं न होत सखी रहत प्रसन्न सदा हिये मुख हासि है ॥ ऐसी सुकुमारी प्यारे लाल जू की प्रानप्यारी धन्य धन्य धन तेई जिनके उपास है । हित ध्रुव और सब जहँ लगि देखियत सुनियत तहँ लगि सबै दुख पास है ॥

ऐसी करौ नवलाल रँगीले जू चित्त न और कहूं ललचाई । जे सुख दुःख रहें लगि देहँ सों ते मिटि जाहिँ इन लोक बड़ाई ॥ संगति साधु बृंदावन कानन तो गुन गाननि मांझ बिहाई । छवि कंज पगों कीर्तिहारे बसौ उर देहु यहै ध्रुव कौं ध्रुवताई ॥ १४२ ॥

दोहा ।

सीसफूल सिखिचन्द्रिका सदा बसौ मन मोर ।
अरु जब चितवत लाड़िलो पिय तन नैननि-कोर॥
इक सत बीस ऽरु पंच मिलि भई सवैया आहि ।
मन दै यह सिंगारसत छिनछिन प्रति अवगाहि॥
नवकिशोरता माधुरी एक बैस रस एक ।
या रस बिनु कहियै न कछु धरियै ध्रुव यह टेक॥
रसपति रससिंगार कौ यह रस है सिंगार ।
धन्य धन्य धन तेइ नर जिनकै यहै विचार ॥
सब तें कठिन उपासना प्रेमपन्थ रस रीति ।
राई सम जौ चलै मन छूटि जाइ ध्रुव प्रीति ॥
प्रेमभजन विन स्वाद नहिं भजन कहा विन स्वाद।
देत प्रान मृग विवस ह्वै सुनत कपट कौ नाद॥
या रस सौं जे रहैं रँगि तिनकी पदरज लेहिँ ।
जिन समझौ यह बात ध्रुव सफल करौ तिन देह॥
भये कबित सिँगार के इक सत अरु पच्चीस ।
दोहनि मिलि सब ठीक भो इक सत दस चालीस॥

इति श्री शृङ्गारसतक सम्पूर्णम् ।

अथ रसरत्नावली लिख्यते ।

दोहा ।

प्रथम समागम सरसरस बन-विहार के रङ्ग ।
बिलसत नागरि नवल कल कोककलानि सु अङ्ग ॥
नमित ग्रीव छबि सींव रहि घूंघटपटहिँ सँभारि ।
चरननि सेवत चतुरई अति सलज्ज सुकुमारि ॥
जो अँग चाहत छुयो पिय कुँवरि छुवन नहिँ देत ।
चितवनि मुसकनि छबिभरी हरिहरि प्राननि लेत ॥
चितवत औरै अंग पिय छुयो चहत अँग और ।
तऊ बनत नहिँ चतुरई कुँवरि चतुरि सिरमौर ॥
अलकै सँवारन व्याज कैं परस्यौ चहत कपोल ।
मृदुल करनि डारत झटकि रसमय कलहकलोल ॥
बातनि लाई लाड़िली बहुविधि करि छलछन्द ।
बुधि बल कैं खोल्यौ चहत नागर नीवीबन्द ॥
नागरताई जहँा लगि कीनी नागरि जानि ।
रहे दीन ह्वै चितै मुख हारि आपनो मानि ॥
आतुर पिय रस सों विवस उर अधीर अकुलात ।
कबहुँ गहत हैं पगनि कौं कबहूँ हाहा खात ॥

यह गति देखति लाड़िली भइ कृपाल तिहि काल।
हारेहीं रस पाइयै उलटि प्रेम की चाल ॥ ६ ॥
नैन कपोलनि चूमि कै लिये अङ्क भरि लाल ।
अधरनि रस दै दै मनों सींचत मैन तमाल ॥
सुरत सिन्धु सुख रस बढ्यो अतिअगाध नहिं पार।
लाज नेम पट दूरि कैं मज्जत दोउ सुकुमार ॥
रस विनोद विपरीतरति बरषत प्यार सु मेह।
चल्यो उमड़ि भरि नेम को तोरि मेड़ जल नेह॥
अंग अंग उरझानि की सोभा बढ़ी सुभाइ ।
मृदुल कनक की बेलि मनु रहि तमाल लपटाइ॥
बिचबिच बोलत बैन मृदु सुनि सुख होत अपार।
रोचक रस पोषक तहां कलकिङ्किनि झनकार॥
प्रबल चौंपसलिता बढ़ी कहत बनत कछु नांहि।
पिय हिलाइ कुच घटनि सों पैरावत तिमि मांहि॥
अति उदार मृदु चित्त सखि प्रेम सिन्धु सुकुवारि।
विविधि रतन सब अङ्ग जे देत सम्भारि सम्भारि ॥
सुरत स्वाति बरषा मनों निसिदिन बरषत आहि।
रह्यो हारि चातक तहाँ तृषा लाल की चाहि ॥

सुर तरङ्ग सुख में कबहुं रसिक बिवस ह्वै जाइ।
कर जनि नासा पुट चटकि लालन लेत जगाइ॥
ऐसौ सुख कौ रस बढ्यौ श्रम नहि जान्यौ जात।
चाहचोप रुचि तहाँ की लालच चितै लजात॥
मैन मनोरथ बेलि बढ़ि सोभा बढ़ी अपार।
मन न घटत तन हटत नहिं अटके सरस बिहार॥
सुरत-केलि ऐसी बनी मानों खेलत फाग।
हावभाव सोधौ भयौ मुख ते बोल अनुराग॥
अति सुरङ्ग सारी सुहौ छबि सों रहि झलकाइ।
कुन्दन बेलि तमाल पर मनु गुलाल रह्यौ छाइ॥
चञ्चल नैननि की चलनि पिचकाइनि की धार।
खिवस भये खेलत दोऊ भीजे रँग सुकुवार॥
श्रम जलकन मुख गौर पर अलकावलि गइ छूटि।
उरकी सब ठां कञ्चुकी हारावलि रहि टूटि॥२४॥
अलक लड़ी मुख लाड़िली प्रीतम प्यार कौ देह।
भ्रमित कानि अञ्चल पवन कर तरंग निज नेह॥
सिथिल भये भूषन बसन चित्रित पीक सुरङ्ग।
लिख्यौ पत्र अनुराग मनुहारे कोटि अनङ्ग॥२६॥

अरुन नयन घूमत बने सोभा बढ़ी सुभाइ ।
अधरनि रँग मादक पियौ सोई रँग झलकाई ॥
पीक कपोलनि फबि रही कहुँ कहुं अञ्जन लीक ।
मनु अनुराग सिँगार मिलि चित्र बनाये नीक ॥
निरखत तेई चिह्न पुनि बढ्यौ चतुरगुन काम ।
गही शरन चरननि तबै जानि सुखद निज धाम ॥
लई लाल जिनि कौ सरन कोमल सुरङ्ग सुदेस ।
कछुक कहत हौं यथामति तिनिकी छबि कौ लेस ॥
कुँवरि चरन सुख-पुञ्ज में अम्बुज छबि हरि लैन ।
चहुँदिसि तिनि पर भ्रमत हैं प्रीतम के अलि नैन ॥
लाल सखी कौ बेष धरि अद्भुत भाँति सिँगार ।
प्रेम प्यार के चाव सों सेवत पद सुकुवारि ॥३२॥
कर पर अञ्चल राखि कै तिनि पर चरन अनूप ।
चितवत लीने मुकर ज्यों अमित माधुरी रूप ॥
चुम्बत छ्वावत नैन हिय जावक चित्र बनाइ ।
देखि अटपटी प्रेम की गति नहिं समुझी जाइ ॥
चरन चारु को हार हिय पिय प्रवीन रस प्रेम ।
ते पद सेवत रहत दिन सहज पर्यौ यह नेम ॥

चरन कञ्ज कुन्दन बरन झलमलाति नख क्राँति।
आइ मिली रस करन को मनो विधुनि की पाँति ॥
मनिगन जुत झलकत रहैं पद अम्बुज सुखदैन ।
सेवत तारागण मनो चन्द विहाने रैन ॥ ३७ ॥
सुमन सुखासन सेज पर लटकी कुँवरि सुभाइ ।
पिय नैननि के करनि सों तहाँ पलोटत पाइ ॥
सब अँग नागर बैस सम नेह रूप गुन ऐन ।
पिय अधीर आधीन तहँ बँधे नैन फल सैन ॥
लोइन भीने मदन रस निरखत पानिप अंग ।
कहि न सकत कछु बात पित वेपथु भये अँग अंग ॥
लिये लाइ हित सों हिये गहि अधरनि मृदु दन्त।
मैन रस सब रह्यौ भरि रोम रोम प्रति कन्त ॥
प्रेम देस वृन्दा विपिन नृप दोउ नवलकिशोर ।
प्रेम खेल खेलत तहाँ नहि जानत निसि भोर॥
अति स्वादो दोउ लाड़िले केलि-पुञ्ज सुखरासि ।
रीझिरीझि बिचबिच करत मधुरमन्द मृदु हाँसि॥
ज्यौं ज्यौं मैन तरङ्ग उठे त्यौं त्यौं मुख छवि काँति ।
कहा कहौं रुचि चाह की छिन छिन नव नव भाँति॥

श्रमजल पीक सुरंग कन झलकत अमल कपोल ।
सुरत सिन्धु के मथत मनु प्रगटे रतन अमोल ॥
यह मुख देखत सखिन के बाढ्यौ अति अनुराग ।
हित सौं देत असीस सब अविचल कुंवरि सुहाग॥
रूप मदन गुन नेहजुत आसौ भयौ अनूप ।
सो रस पीवत छिनहि छिन मिलि वृन्दावन भूप॥
तिहि सुखको रस-मोद सखि जो उपजत दुहु माहिँ।
पलपल पीवत दृगनि भरिललितादिक न अघाहिँ॥
रसनिधि रस रतनावली रसिक रसिकनी केलि ।
हित सौं जो उर धरै ध्रुव वढ़ै प्रेम रस वेलि ॥
महागोप्य अद्भुत सरस चिन्तत रह मनमांहि ।
ता रस को रसिकनि बिना सुनि ध्रुव कहिनौ नाहि॥

इति श्रीरसरत्नावली सम्पूर्णम् ।

अथ नेहमञ्जरी लिख्यते।

चौपई।

श्री वृन्दावन सोकी सोवां। विहरत दोऊ मेलि भुज ग्रीवां॥ १॥ राजत तरुन किशोर तमाला। लपटी कञ्चन बेलि रसाला॥२॥ अरुन पीत सित फूलनि छाए। मनो बसत निज धाम बनाए॥ ३॥ बरन बरन के फूलनि फूली। जहँ तहँ लता प्रेमरस झूली॥ ४॥ तीनि भाँति के कमल सुहाये। जल थल विगस रहे मन भाये॥ बहुत भाँति के पञ्छी बोलें। मोर मराल भरे रस डोलें॥ ६॥ त्रिविधि पवन सन्तत जहँ बहई। जैसी रुचि तैसीये बहई॥ ७॥ हेम बरन अद्भुत धरमाई। हीरनि खचो अधिक झलकाई॥ ८॥ रजकपूर की तहाँ सुहाई। सौरभ मैं सन्तत सुखदाई॥९॥ तरनिसुता चहुंदिसि फिरि आई। मनों नीलमनि माल बनाई॥ श्रीवृन्दावन की छवि ऐसी। का पै कही जाति है तैसी॥ ११॥

दोहा ।

फूलि जहँ तहँ देखिये श्रीवृन्दावन माँहि ।
द्रुमवेली खग सहचरी बिना फूल कोउ नाहिं ॥

चौपई ।

सुन्दर सहज छवीली जोरी । सहज प्रेम के रँग में बोरी ॥ १२ ॥ खेलत फिरत निकुञ्जनि खोरी । एक बेस पिय कुँवरि किशोरी ॥१३॥ तैसिय संग सहचरी भोरी । बँधो बङ्क चितवनि की डोरी ॥ १४ ॥ बिन प्राननि डोलत सँग लागी । प्रेम रूप के रँग अनुरागी ॥ १५ ॥ महा प्रेम की रासि रंगीलि । चित्त हरन दोऊ छैल छवीलि॥१६॥ जहँ जहँ चरन धरत सुखदाई । झरि झरि रूप परत तहँ माई ॥ १७ ॥ जो तिहि ठाँव है देखै आई । तन की ताहि भूलि सुधि जाई ॥ १८ ॥ नवकिशोर बरने क्यों जाहीं । प्रेम रूप की सीवां नाहीं ॥ १९ ॥ तिनि को रूप कहन को पारै । जो देखै सो पहिले हारै ॥ २० ॥ ऐसे दोऊ आप में राते । अहनिसि रहत एक रस माते ॥ २१ ॥ अँग अँग विवस और सुधि नाहीं । प्रेमरसहिँ सब

पान कराहीं ॥२२॥ अद्भुत रस पीवत हैं दोऊ। तिनमें तृपित होत नहि कोऊ ॥ २३ ॥

दोहा।

मत्त परस्पर रहत ध्रुव एक प्रेमरत रात ।
अति सुरङ्ग लोयन रहैं दिन अनुराग चुचात ॥

चौपाई।

हावभाव गुन सींव रँगीली। मुख पर पानिप झलक छबीली ॥ २५ ॥ बैठे कुँवर सोई छबि देखैं। लोभी नैन न परत निमेखैं ॥ २६ ॥ रहे चकित ह्वै रसिक-बिहारी। रूप छटा नहि जाति सँभारी ॥ २७ ॥ सहजहि प्रेम ढार ढरि जाहीं। तिहि रस जान न घाम न छाहीं ॥ २८ ॥ छिन छिन प्रति रुचि बाढ़ै भारी। रही भूल सो प्रेम निहारी ॥ ३० ॥ कबहूं लै मृदु कुसुम सुरङ्गनि। गुहि भूषन बाँधत सब अंगनि ॥ ३१ ॥ बार बार पीवत पिय पानी। चितै कुँवरि कछु इक मुसकानी ॥ ३२ ॥ छबि सीवां भुज-लतनि पियारी। छबि तमाल पिय भर अकवारी ॥ ३३ ॥ मँहा

मधुररस जुगल बिहारा । जहँ लगि प्रेम सकल को सारा ॥ ३४ ॥ रहत दीन ह्वै लीन रँगीलौ । नखसिख सुन्दर रसिक रसीलौ ॥ ३५ ॥ तिनके प्रेम प्रेमबस कीनी । सखि सों कहत सखी रँग भीनी ॥३६॥

दोहा ।

जद्दपि मन चञ्चल हुतौ मोह्यौ अद्भुत रूप ।
बिसरि गई सब चतुरई परत प्रेम के कूप॥३७॥

चौपाई ।

प्रिया-बदन सुन्दर अति राजै । सहज रूप को चन्द बिराजै ॥३८॥ मुसकनि मन्द हँसनि दुति न्यारी। तापर दामिनि कोटिक वारी॥३९॥ झलक कपोलनि की चिकनाई । अँखियाँ रपट गिरत तहँ माई ॥४०॥ अरुन असित सित नैन सलोने । छ्वै छ्वै जात हैं कानन कोने ॥ ४१ ॥ सहज चपल इत उतहि निहारैं । बरषत मनु अनुराग की धारैं ॥ ४२ ॥

दोहा ।

रंगभरे अरु रसभरे सरस छबीले नैन ।
सींचत पिय-हियकमल को नेहनीर मृदु सैन ॥

चौपाई।

अति अनूप बेंदी जगमगै। चितै चितै पिय पाइनु लगै ॥४४॥ नासिका बेसरि मोती झलकै। मनो रूप की आभा ललकै ॥४५॥ अद्भुत रूप मेह सो बरसै। तऊ कुँवर चातिक ज्यौं तरसै॥ छवि डोलै चरननि सो लागी। उपमा सबै देखि यह भागी ॥४७॥ अद्भुत सहज रूप की माला। ऐसी कुँवरि किशोरी बाला॥४८॥ पहिरि कुँवरि छिन छिनहि सँभारै। ऐसो लोभ न नेकु उतारै॥ कुँवर प्रेम को सागर राजै। प्रिया-प्रेम तहाँ भँवर बिराजै ॥ ५० ॥ ज्यौं सब जल फिरि फिरि तहँ परई। ऐसे लाल प्रिया दिसि ढरई ॥ ५१ ॥

सोरठा।

प्राननिहू के प्रान, पिय के सर्वसु लाड़िली।
तिनके नहि गति आन, देखि देखि जीवत सखी॥

चौपाई।

लालहि प्रिया लगत अरु प्यारी। तापर प्रान करत बलिहारी ॥ ५३ ॥ जहँ जहँ चरन धरति सुकुमारी। सो ठाँ चूमत लाल बिहारी॥

प्रेम अटक को अटपट रीती। जाने सो जिनि के उर बीती ॥ ५५ ॥ कहिबे के नहि प्रेम के बैना। मन समुझै कै दोऊ नैना ॥५६॥ जिहि जिहि सुरँग सुमन की ओरे। चितवत नेकु नैन की कोरे ॥५७॥ धाइ कुँवर तिहि फूलहिँ ल्यावै। मन सिवा के पियहि रिझावै ॥ ५८ ॥ प्रेम रीति को जाने माई। बिन पिय रसिक कुँवर सुख-दाई ॥ ५९ ॥ भए दीन यों तनो बड़ाई। पुनि ताको बातें न सुहाई ॥६०॥ माँगत हैं धन भाग बड़ाई। ऐसो कुंवरकिशोरा पाई ॥ ६१ ॥ अब मोको कछु और न चहिये। नैननि में अञ्जन ह्वै रहिये ॥ ऐसे नैन लगे सखि प्यारे। कैसे रहै आप तें न्यारे ॥६३॥ अस न होइ तो यह उर धरहीं। मो हो तन बेचित यो करहों ॥ ६४ ॥ धन्य सोइ पलु छिन सखि मेरे। कुँवरि नैन भरि मो तन हेरे ॥ ६५ ॥

दोहा।

कोटि काम सुख होत है हँसि चितवत पिय ओर।
भूलि जाति तन की दसा परसि प्रेम झकोर ॥

चौपाई ।

कुंवर प्रेम जब मनमें आयौ। बचन किशोरी कहन न पायौ॥ भरि हीयौ अतिहो अकुलानो। पिय किशोर के उर लपटानो॥ फिरि गयौ प्रेम दुहुनि पर माई। अपनी अपनी सुधि बिसराई॥ पिय पिय प्रिया कहत पिय प्यारी। रहिगे ऐसे भरि अँकवारी॥ प्रेम नीर उर अञ्चल भीने। चितवत नैन चकोरी कीने॥ ७१॥

दोहा ।

सहज रँगीली लाड़िली सहज रँगीलो लाल ।
सहज प्रेम की बेलि मनु लपटी प्रेम-तमाल ॥

चौपई ।

देखि सखी तहँ सबै भुलानी। एक रहीं मनु चित्र की बानी॥ एकनि कें नैनन जल ढरई। मनो प्रेम के झरना झरई॥ इक गिरी धर अति मुरझानी। रहि गइ एक लता लपटानी॥ भइ अचेत पुनि चेतनिहारें। तब सबहिनि मिलि आनि सँभारें॥ देखे दोउ रस में उरझाने। तब सबहनि के नैन सिराने॥ ७७॥

सोरठा ।

जुगल रसिक सिरमौर, सब सखियन के प्रान हैं ।
नाहिन गति कछु और, तिनही के सुख सों रँगी॥

चौपई ।

महा प्रेम गति सब तें न्यारी । पिय जानैं कै प्रानपियारी ॥ उरझै मन सुरझत नहिँ केहूं । जिहि अँग ढरत होत सुख तेहूं ॥ एकै रुचि दुहु में सखि बाढ़ी । परि गइ प्रेम ग्रन्थि अति गाढ़ी॥ देखत देखत कल नहिँ माई । तिनको प्रेम कहो नहिँ जाई ॥ सहज सुभाइ अनमनी देखैं । निमिषनि कोटि कलप सम लेखैं ॥ हँसि चितवत जब प्रीतम माहीं । सोई कलप निमिष ह्वै जाहीं॥ खेलनि हँसनि लाल को भावै । नेह को देवी नितहि मनावै॥ कौतुक प्रेम छिनहि छिन होई। यह रस बिरला समझै कोई ॥ ज्यों ज्यों रूपहि देखत माई । प्रेम तृषा को ताप न जाई ॥

दोहा ।

प्रेम तृषा को ताप अब कैसेहुं कही न जात ।
रूप नीर छिरकत रहैं तऊ न नैन अघात ॥८८॥

चौपाई।

बिच बिच उठत हैं प्रेम-तरंगा। खेलत हँसत मिलत अँग अंगा॥ नवल राधिका बल्लभ जोरी। दूलह नित्य दुलहिनो गोरी॥ सोभित नित्य सुहाने बागे। नये नेह के रस अनुरागे॥ खेलत खेल तहां मनभाये। यह कौतुक कबहूं न अघाये॥ नेह मञ्जरी सहजहिं भई। हरी एक रस छिन छिन नई॥ सींचत चाह चौंप के जल सों। लगि रहि दृग कमलन के दल सों॥

सोरठा।

राधावल्लभ लाल, रसिक रँगीले बिबि कुंवर।
परे प्रेम के ख्याल, रुचत न तिनकों और कछु॥

चौपई।

नव-निकुंज रँग रँग चितसारी। राजत नवल कुंवर सुकुमारी॥ रस-बिहार की चौपड़ खेलैं। दोउ प्रवीन अंसनि भुज मेलैं। सखियन तलप बिसात बनाई। कहि न जाइ सोभा कछु माई॥ पासे नैन कटाच्छनि ढारैं। हावभाव रँग रँग की सारैं॥ जो अँग लालहि परस्यौ भावै।

समुझि किशोरी ताहि दुरावै ॥ घत अनेक मन में उपजाई । हँसे कुंवर जब नहिँ बनि आई ॥ हारि मानि पग परत बिहारी । रसिकसिरोमणि की बलिहारी ॥ नैननि सैननि कछु मुसकानी । भिने खेल रस रैनि न जानी ॥ उरज कपोल भलक छवि छाई । चितवत लाल बिवस ह्वै जाई ॥ तबहिँ कुँवर भरि लिय अँकवारी । करुना करि दियो अधर-सुधा री ॥ १०५ ॥

दोहा ।

नागरि कोककलानि में विलसत सुरत बिसार ।
रोचक रव रसना तहां अरु नूपुर झनकार ॥

चौपाई ।

नवल निकुंज रँगीले दोऊ । तिहि ठाँ सखी नाहिने कोऊ ॥ रसिक लाल ऐसे रँग भीने । तन मन प्रान प्रिया कर दीने । कबहूं रूप सखी को धरहीं । रुचि ले सब बातन कों करहीं ॥ नखसिख लों सिंगार बनावैं । याही सेवा में सुख पावैं ॥ अद्भुत बेनी गूथि बनाई । मनों अलिन कीं सेना आई ॥ १११ ॥

दोहा ।

बिच बिच मौरी सुरँग दै गूंथी कवरि बनाइ ।
मिलि अनुराग सिँगार दोउ गही सरन मनु आइ॥

चौपाई ।

नेननि अञ्जनरेखा दीनी । तबहिँ कुंवरि कर आरसी लीनी॥ रीझि सुअंक लाल भरि लीनो । अति हित सों अधरामृत दीनो॥ समुझि सनेह नैन भरि आये । मनो कञ्ज आनँदजल छाये॥ विवस होइ तब उर लपटाने । बीते कलप न नेकु अघाने॥ रहत यहै भ्रम पिय-मन माहीं । प्रानप्रिया मोहि मिली कि नाहीं॥११७॥

दोहा ।

देखत खेलत हँसतहीं गये कलप बहु बीति ।
पल समान जाने नहीं विलसत दिन यह रीति॥

चौपाई ।

कौन प्रेम तिहि ठाँ को कहिये । दुहूं कोद चितवत सखि रहिये॥ नित्य प्रेम एक रस धारा। अति अगाध तिहि नाहिन पारा॥ महा मधुर रस प्रेम की प्रेमा। पीवत ताहि भूलि गये नेमा॥

तैसो सखी रहैं दिन राती। हित ध्रुव जुगलनेह मदमाती ॥ १२२ ॥

दोहा।

रस-निधि रसिककिशोर विवि सहचरि परमप्रवीन।
महा प्रेम रस मोद में रहत निरन्तर लीन॥१२३॥

चौपाई।

प्रेम बात कछु कही न जाई। उलटी चाल तहां सब माई ॥ प्रेम बात सुनि बौरा होई। तहां सयान रहै नहिँ कोई॥ तन मन प्रान तिही छिन हारै। भलो बुरी कछु वे न विचारै॥ ऐसो प्रेम उपजिहै जबहीं। हित ध्रुव बात बनैगी तबहीं॥ ताको जतन न दीसै कोई। कुँवरि कृपा तें कहा न होई॥ वृन्दावन रस सब तें न्यारो। प्रीतम जहां अपनपौ हार्‍यो ॥ श्रीहरिवंशचरन उर धरई। तब या रस में मन अनुसरई॥ मो मति कवन कहै यह बानी। तिन चरनन बल कछुक बखानी॥ जुगल प्रेम मनही में राखौ। अजमिलि सों कबहूँ जिनि भाखौ॥ १३२ ॥

दोहा ।

पिय प्यारी को प्रेमरस सकहि तो मनमें राखि।
या रस के भेदो बिना अनमिल सों जिन भाखि॥

चौपाई ।

प्रेम बात आनँद मैं माई। ताहो सुनत हियौ जु सिराई॥ जहँ लगि सुख कहियत जग माहीं। प्रेम समान और कछु नाहीं॥ यह रस जाके उर नहिं आयौ। तिहि जग जन्म वृथाहि गँवायौ॥ सब रस मैं देखि अवगाही। सब कौ सार प्रेम-रस आही॥ प्रेम छटा जिहि उर पर परही। सो सुख स्वाद सबै परहरही॥ १३८॥

दोहा ।

जिहँदुखसमनहिँऔरसुख सुखकी गति कहै कौन।
वारि डारि ध्रुव प्रेम पर राज चतुर्दश भौन॥

चौपाई ।

जहँ लगि उज्जल निरमलताई। सरस सनिग्ध सहज मृदुताई॥ मादिक मधुर माधुरी अंगा। दुर्लभता के उठत तरंगा॥ नव तन नित छिनही छिन माहीं। इक रस रहत घटत रुचि

नाहीं ॥ अतिहि अनूपम सहज सुछन्दा । पूरन कला प्रेम वर चन्दा ॥ सब गुन तें ताकी गति न्यारी । जाके बस भे लालबिहारी ॥ १४४ ॥

दोहा ।

कहि न सकत रसना कछुक प्रेम स्वाद आनन्द ।
को जाने ध्रुव प्रीति रस बिन वृन्दावनचन्द ॥

चौपाई ।

प्रेम की छटा बहुत विधि आही । समुझि लई जिन जैसी चाही ॥ अद्भुत सरस प्रेम निज सोई । चित्त चलन की जिहि गति खोई ॥ रसिक रसिकनी गुन अनुरागे । एक प्रेम दम्पति मन पागे ॥ इक छत प्रेम सार निज धारा । जुगल किशोर निकुंज विहारा ॥ यह विहार जाके उर आवै । ताहि न बात दूसरी भावै ॥ औरो भजन आहिँ बहुतेरे । ते सब प्रेम-भजन के चेरे॥

दोहा ।

नारदादि सनकादि ध्रुव उद्धव अरु ब्रह्मादि ।
गोपिन को सुख देखि किय भजन आपनो वादि॥

चौपाई ।

तिन गोपिन के दुर्लभ माई । नित्य विहार सहज सुखदाई ॥ सिव श्रीपति यद्यपि ललचाहीं। मनप्रवेश तिनहूं को नाहीं ॥ ऐसे रसिक किशोर विहारी । उज्जल प्रेम विहार अहारी ॥ अति आसक्त परस्पर प्यारे । एक सुभाव दुहुनि मन हारे॥ रस में बढ़ी नेह की बेली । तिहि अवलम्बे नवल-नवेली ॥ १५७ ॥ दोहा ।

हित ध्रुव दुर्लभ सबनि तें नित्य विहार सरूप ।
ललितादिक निज सहचरी सो सुख लहत अनूप॥

चौपाई ।

दुर्लभ कों दुर्लभ अति माई । वृन्दाविपिन सदन सुखदाई ॥ बेलि फूल फल ललित तमाला। प्रेमसुधा सींचत सब काला ॥ मृगी विहंगी सखी अपारा । सब के तिहि ठां यहै अहारा ॥ नित्य किशोर एकरस-भीने । तन मन प्रान नेह बस कीने ॥ यहि विधि विलसत प्रेमहि सजनी । जानत नहिं कित वासर रजनी ॥ नेहमञ्जरी हित ध्रुव गावै । दम्पति प्रेममाधुरी पावै ॥१६४॥

दोहा ।

प्रेमधाम बृन्दाविपिन मध्य मधुर बरजोर ।
सरिता रस सिंगार की जगमगात चहुँओर ॥

सोरठा ।

प्रेममई दोउ लाल, प्रेममई सहचरि जहां ।
सेवत हैं सब काल, प्रेममई बृन्दाविपिन ॥१६६॥

दोहा ।

वैभव सब ऐश्वर्यता ठंढो सेवत दूरि ।
परसन पावत कबहुं नहिं श्रीबृन्दावन-धूरि ॥
ब्रह्मजोति को तेज जहँ जोगेश्वर को ध्यान ।
ताही को आवर्ण तहँ नहिं पावै कोउ जान ॥
नेहमञ्जरी मञ्जुरस मञ्जुल कुञ्जविलास ।
जिहँ रस के गावत सुनत रसिकन होत हुलास॥
रूप रंग की वेलि मृदु छवि के लाल तमाल ।
नेहमञ्जरी दुहुनि में हरी रहत सब काल॥१७०॥

इति श्री नेहमंजरी सम्पूर्णम् ॥

अथ रहस्यमञ्जरी लिख्यते।

दोहा।

करुनानिधि अरु कृपानिधि श्रीहरिवंश-उदार।
बृन्दाबनरस कहन कौं प्रगट धस्यौ औतार ॥१॥

चौपाई।

बृन्दाबनरस सबकौ सारा। नित सर्वोपरि जुगलबिहारा॥ नित्य किशोर रूप की रासौ। नित्य बिनोद मन्द मृदुहासौ॥ नित ललितादि भरी अनन्द। नित प्रकास बृन्दाबनचन्द॥ कुंजनि सोभा कहा बखानौं। छबि फूलन सौं छाई मानौं॥ राजत सुमन द्रुमनि बहु रंगा। मानो पहिरे बसन सुरंगा॥ नाचत हंस मयूरी मोर। शुक सारिक पिक नद चहुंओर॥ झलमलात महि कहि नहि जाई। चिन्तामणि में हेम जराई॥ सोभा दुतिय बढ़ी अधिकाई। फूलन की मनु अवनि बनाई॥ छबि सों जमुना बहै सुहाई। मनो अनन्द दै चल्यो माई॥ जहँ तहँ पुलिन नलिन कल-कूला। फूले सबके मनोरथ

फूला ॥ फूले फिरत मधुप मधुमाते। जलजन सौरभ के रस राते ॥ सीतल मन्द समीर सुवासा। बृन्दाकानन रंग हुलासा ॥ सुख की अवधि प्रेम को ऐना। सेवत मैननि की सत सैना ॥१४॥

दोहा।

बृन्दावनरस कह कहौं कैसेहुं कहत बनै न ।
नैनन के रसना नहीं रसना के नहिँ नैन ॥१५॥

चौपाई।

विहरत तहां परम सुकुमारा। रूप माधुरी को नहिं पारा ॥ प्रेममगन अलबेली भांति । जगमगि रह्यो वन अंगन क्रांति॥ सखी सबै हित की हितकारनि। जुगल चितवनी जाननिहारनि॥ तिनहीं के रँग सों अनुरागी। महा मधुर सेवा रस-पागी ॥ रुचि लै रुचि सों दुहुनि लड़ावैं। पलु पलु सुख को रंग बढ़ावैं ॥ फूल सों आनन भरि मधु आने। फूल चँदोवा छवि सों ताने ॥ फूल सों फूलनि सेज बनाई। अति सुगन्ध सोंधै छिरकाई ॥ तापर राजत रँग विवि ओर। सुख

जोहत ज्यों चन्दचकोर ॥ नेकु चितै तिरछै मुस-
कानो । लालहिँ सुधि बुधि सबै भुलानो ॥२४॥

दोहा ।

बसौ जु प्यारे लाल उर वह चितवनि मुसकानि।
तब तें कबहूं ना छुटी चुभी जु उर में आनि ॥

चौपाई ।

तिनकों प्रेम औरही भांति। अद्भुत रीति कही
नहिँ जाति ॥ जो करुना करि वे उर आनै।
तब रसना जो कछू बखानै ॥ जाको हियो सरस
अति होई। यह रस रीतिहि समुझै सोई ॥ सू-
छम प्रेमबिरह सुखदाई। दिन सँजोग में रहत
है माई ॥ देखतहीं अनदेखी मानै। तिनकी
प्रीतिहि कहा बखानै ॥ प्रेम लालचो लाल रँ-
गीलो। अवधि प्यार की रसिक रसीलो ॥ कर
अँगुरिन भुज मूलनि परसैं। अधर-पान रस कों
पिय तरसैं ॥ छुइ न सकत उरजनि कर काँपै।
चतुरि कुँवरि अञ्चल सो ढाँपै ॥ सो वह छटा
प्रेम की न्यारी। लालहिँ बिवस करत अतिभारी॥

तबहिँ सँभारि लेति सुकुमारी । अधर कपोलनि चूमत प्यारी ॥ जब देखी अँखिया न उघारी । प्याइ जिवाई अधरसुधा री ॥ जबहीं उर सों घुरि लपटाहीं । तब नैना विरही ह्वै जाहीं ॥ छुटे जबहिँ छवि देख्यौ करै । विरह आनि अङ्गनि सञ्चरै ॥ भाँति अटपटा सों चित हर्‌यौ । जात नहीं उर धीरज धर्‌यौ ॥ छिन छिन दसा और की औरै । यामें रहत सखी सिरमौरै ॥ ४० ॥

दोहा ।

प्रेम अटपटी चटपटी रही लाल उर पूरि ।
और जतन ताकौ न कछु प्रिया सजीवनि मूरि॥

चौपाई ।

विरह सँजोग छिनहि छिन माहीं । यद्यपि ग्रीवनि मेले बाहीं ॥ यहि विधि खेलत कलप बिहाने । परमरसिक कबहूं न अघाने ॥ एक समै मुख की छवि पानिप । निरखत भूले सबै सयानप ॥ चाह प्यार की यों फिरि गई । सोई आनि बिच अन्तर भई ॥ कुँवरि छबीली मनि धरि आगे । विवस होइ पिय बिलपन लागे ॥ चितवत चित-

वत लालविहारी। कहत यहै कहँ कहँ सुकुमारी॥ प्रेम तरङ्ग कहे नहिँ जाहीं। छिन छिन जे उपजत मनमाहीं ॥ ४८ ॥

दोहा।

कौन प्रेम किहि फन्द परि मोहन-नवलकिशोर।
भूलि रहीं चितवत खरी सखीमाल चहुंओर ॥

चौपाई।

रस-निधि रसिक प्रवीन पियारी। लालहि राखत ज्यों फुलवारी। प्रेम प्यार जल सींच्यौ करहीं। पलु पलु प्रति तिनके रँग ढरहीं॥५१॥

दोहा।

फूल पान ज्यों राखहीं ढाँपि प्यार के चीर।
छिन छिन तिनको छिरकहीं नेह-कटाछन नीर॥

चौपाई।

रसिकमौलि-मनि लालविहारी। जिनकी सर्वस प्रानपियारी॥ नैन जोरि देखत पिय रूपहिँ। नैन माधुरी झलक अनूपहिँ॥ कौन भाँति छवि मुख की कहिये। चितवत सखी भूलही रहिये॥ भौंहनि भाइ कटाच्छ तरङ्गा। गह्यौ

लाल मन प्रेम अनङ्गा ॥ स्वेद कम्प वै पथ अँग अङ्गा । प्रानप्रिया भरि लेत उछङ्गा ॥ परसतहूं परस्यो नहिँ जानें । छिन छिन नई नई रुचि माने ॥ सो गति चितै सखी बलि वाहीं । वारि फेरि अञ्चल बलि जाहीं ॥ प्रेम प्यार बनत न मन सरस्यौ । और स्वाद कबहूं नहिँ परस्यौ ॥ रूप रङ्ग सौरभता तन को । जोवनि यहै दिनहि पिय मन की ॥ देखिबौ जहाँ विरह सम होई । तहँ को प्रेम कहा कहै कोई ॥ ६२ ॥

दोहा ।

अटपट रँग को विरह सुनि भूलि रहे सब कोइ ।
जल पीजत है प्यास कों प्यास भयो जल सोइ॥

चौपाई ।

महा भाव सुखसार स्वरूपा । कोमल सील सुभाउ अनूपा ॥ सखी हेत उद्वर्त्तन लावैं । आ-नँद-रस सों सबै अन्हावैं ॥ सारी लाज की अति-हीं घनी । अँगिया प्रीति हियै कसि तनी ॥ हाव भाव भूषन तन बने । सौरभ गुनगन जात न गने ॥ रसपति रस को रचि पचि कीनों । सो

अञ्जन लै नैनन दीनौ ॥ मेहदी रँग अनुराग सु-रङ्गा। कर अरु चरन रचे तिहि रङ्गा ॥ बङ्क चितवनी रस सों भीनी। मनु करुना की वरषा कीनी ॥ झलमल रह्यौ सुहाग की जोती। नासा फबि रहि पानिप मोती ॥ नेह फुलेल बार वर भीने। फूल कै फूलनि सों गुहि लीने ॥ मौरी रँग अनुराग की डोरी। तिहिं कर बाँध्यौ पिय मन गोरी ॥ ७३ ॥

दोहा।

हासि झलक हारावली अधर-बिम्ब अनुराग ।
त्रिबली है वा रूप की नव सत पोत सुहाग ॥

चौपाई।

ऐसी प्यारी पिय उर बसै। ज्यों घन में दिन दामिनि तरसै ॥ अद्भुत वृन्दावन रसखानी। अ-द्भुत दुलहिनि राधारानी ॥ अद्भुत दुलह नित्य किशोर। अद्भुत रस के चन्दचकोर ॥ अद्भुत जहाँ प्रेम को रङ्गा। अद्भुत बन्यौ दुहुन कौ सङ्गा ॥ अद्भुत सहज रूप सुकुमारी। वृन्दावन की मनि उँजियारी ॥ तिनको सेवत लालबिहारी।

तन मन वचन रहे तहँ हारी ॥ अद्भुत प्रेम एक व्रत लीनो । छाड़ि प्रियहि मन अनत न दीनों॥ छिन छिन औरै और सिँगार । गुन मालिनि पहिरावति हार ॥ ठाढ़े होइ रहत करजोरें । लै बलाइ वारत तृण तोरें ॥ ८३ ॥

दोहा ।

चितवत जितहीं लाड़िलो तितहीं मोहनलाल ।
सो ठां प्यारी ह्वै गई लखौ प्रीति की चाल ॥

चौपाई ।

तब मुसकाइ लिये उर लाई । रीझि प्रेम-माला पहिराई ॥ अद्भुत प्रेम-विलास अनङ्गा । अद्भुत रुचि के उठत तरङ्गा ॥ अद्भुत प्रेम कह्यो नहिँ जात । रसिक रँगीले तिहँ रँगरात ॥ ललित विशाखा सखी पियारी । दम्पति मनसुख समुझनहारी ॥ सब सखियनि के दोऊ प्यारे जीवनि प्रान चखन के तारे ॥ ८९ ॥

दोहा ।

भुज सों भुज उर सों उरज अधरअधर जुरि नैन ।
ऐसी विधि जो रहैं तौ कछुक होइ चितचैन ॥

चौपाई।

या सुख पर नाहिन सुख और। तिहि रस रचे रसिक सिरमौर॥ या रँग सों ध्रुव जो मन लावै। ताको भाग कहत नहिँ आवै॥ ऐसे अद्-भुत भक्त अनूप। जिनके हिये रम्यो यह रूप॥ श्रीहरिवंशचरन उर धारी। सो या रस में है अनुसारी॥ श्रीहरिवंशहि हित सों गावै। जुगल विहार प्रेमरस पावै॥ जापर श्रीहरिवंश-कृपाल। ताको बांह गहै दोउ लाल॥ श्रीहरिवंश हिये जो आनै। ताकों वह अपनो करि जानै॥ यह रस गायो श्रीहरिवंश। मुक्ता कौन चुगै बिन हंस॥ रसद-रहस्यमञ्जरी भई। छिन छिन जोति होति है नई॥ दुहुवनि मध्य खिनी लै बई। आनँद-बेलि बढ़ी रसमई॥ श्रीहरिवंश प्रगट करि दई। जाको भाग तिनहिँ ध्रुव लई॥ १०१॥

दोहा।

नित्यहि नित्य विहार दोउ करत लाड़िली लाल।
वृन्दावन आनन्दजल वरषि रह्यो सब काल॥

रूपरँगीली सभा सों प्रेमरँगीलो राज ।
सखी सहेली संग रँग अद्भुत सहज समाज ॥
यह सुख देखत कवठ दृग रुकै न आनँद-वारि ।
और अङ्ग हारे सबै नैन न मानत हारि ॥१०४॥
सत्रह सै है ऊन अरु अगहनपछि उँजियारि ।
दोहा चौपाई कहो ध्रुव इक सत परि चारि ॥

इति श्री रहस्यमञ्जरी सम्पूर्णम् ।

अथ सुखमञ्जरी लिख्यते ।

दोहा ।

सखी एक हित की अधिक आनँद अवसर पाइ ।
दसा कुँवर की प्रिया सों कहति बनाइ बनाइ॥
चाह मदन की विथा की नाहिन है कछु और ।
पल पल पिय हिय में बढ़ै यहै सोच मन मोर॥
सिथिल अंग बलहीन सखि कछुक भयो तन छीन।
करि उपाइ प्यारो प्रिया तुम जल हौ वे मीन ॥

सोरठा ।

मिटत नहिन यह रोग, तुम हौ मूरिसजीवनी ।
बन्यौ आनि संजोग, अब विलम्ब कीजै न बलि ॥

दोहा ।

उनकी लच्छन कहौं कछु चित दै सुनि सुकुमारि।
नारी में प्रानहि बसैं नारी नारि निहारि ॥
जैसें विथा बढ़ै नहीं कीजे जतन विचारि ।
दैबे कों कछु और नहिँ दैहै प्रान-निवारि ॥६॥
सुनत सखी के वचन ये करुना भई अपार ।
तबहिँ लाड़िली हेत सों करन लगी उपचार ॥
प्रथमहि नारी देखि के हिय कर धार्यौ आनि ।
रोम रोम सानँद भयो परस होतही पानि ॥८॥

बहुत भाँति की औषधी चितवनि मुसकनि भाइ।
सँभराये तिहि छिन सखी अधरसुधारस प्याइ॥
कोककला के रस विविधि जानति परमउदार।
दियौ किशोरी प्यार सौं अङ्क मृगाङ्क सँवारि॥
नैन कटाच्छ सुवास अँग चितवनि प्यारी कौन।
अतिप्रवीन रस लाड़िली लालहि पथ मन दौन॥
परिरम्भन चुम्बन अधिक रति-विलास आहार।
तुष्ट पुष्ट बल रुचि भई बाढ़ौ क्षुधा अपार॥१२॥
गरे पितम्बर मेलि के चरनन पर धरि सीस।
दियो अपनपौ रीझि तब श्रीवृन्दाबन-ईश॥१३॥
पुनि पग परसे सखिन के कीन बड़ो उपकार।
तासों इतनी कहि कुंवर पहिरायो उर हार॥
मदन क्षुधा पानिप तृषा सरिता बढ़ी गँभीर।
प्रेममगन विलसत रहैं पावत नाहिन तीर॥१५॥
विविध विहार विनोद रँग उठतहिँ मदन-तरङ्ग।
अंग अंग सब चपल भे निर्तत मनहु सुधंग॥१६॥
हार वलय किङ्किनि झलक नूपुर की झनकार।
परे मीन मन दुहुनि के रसप्रवाह की धार॥

हावभाव लावण्यता अद्भुत प्रेम विहार ।
केलि खेल निबरत नहीं तैसइ खेलनहार ॥१८॥
रूपसुधा पीवत दोऊ नहिँ जानत दिन रैन ।
पल कौ अन्तर परत नहिँ जुरे नैन सौं नैन॥१६॥
तृपित न कबहूं भये हैं जदपि मिले अँग अंग ।
रुचि न घटै छिन छिन बढ़ै प्रेम अनंग-तरंग ॥
छके रहत दोउ लाड़िले यह रसरंग विहार ।
सँभरावत छिन छिन सखी तब कछु होत सँभार॥
ज्यौं ज्यौं करत विहार दोउ बाढ़त चाह विलास ।
जल पीजत है प्यास कौं सोइ जल भयौ पियास॥
रहे लपटि आनन्द सौं आनँद कौ पट तानि ।
हित ध्रुव आनँद कुञ्ज में रहि रह्यौ आनँद जानि ॥
यह सुख निरखति सहचरी जिनिके यहै अहार ।
प्रेममगन आनंद-रस रह्यौ न देह सँभार ॥२४॥
अद्भुत वैदक मधुररस दोहा भये पचीस ।
सुनत मिटै हृदरोग ध्रुव झलकहि उर बन ईस ॥

इति श्रीसुखमञ्जरी सम्पूर्णा ।

अथ रतिमञ्जरी लिख्यते।

दोहा।

हरिबंश नाम ध्रुव कहतही बाढ़ै आनँद बेलि।
प्रेम रंग उर जगमगै जुगल नवल रस केलि॥१॥
श्रीहरिवंशपद बन्दि कै कहत बुद्धि अनुसार।
ललित बिसाखा सखिन की यह रस प्रान अधार॥
एती मति मोपै कहाँ सिन्धु न सीप समाइ।
रसिक अनन्य कृपा बल जो कछु बरन्यो जाइ॥

चौपाई।

प्रथमहि सुमिरों श्रीवृन्दावन। जा देखत फूलै यह तन मन॥४॥ कुन्दनरचित खचित धर बनी। सो छबि कैसे जात है भनी॥५॥ रज कपूर की झलकनि न्यारी। हियो सिराइ निरखि सो भारी॥६॥ ललित तमाल लता लपटानी। कूजत कोकिल अति कल बानी॥७॥ तपनसुता छबि जात न बरनी। रसपति रस ढार्यो मनु धरनी॥८॥ कुञ्ज सुरङ्ग सुदेस सुहाई। रतिपति रचि रचि रुचिर बनाई॥९॥

दोहा ।

कुमकुम अम्बर अगर सत बेलि चमेली फूल ।
सखियनि सब की मोद ले रची सेज सुख-मूल ॥

चौपाई ।

अब बरनों निस रससिंगार । सुखनिधि हरिसनि कुञ्जबिहार ॥ ११ ॥

दोहा ।

रूपपुञ्ज रसपुञ्ज दोउ पौढ़े प्रेम प्रजङ्क ।
बिलसत नवलबिहारबर सब बिधि छोड़ निसङ्क ॥

चौपाई ।

नवल नायिका अति सुकुमारी । नाइक सरसनि कुञ्जबिहारी ॥१३॥ अति प्रवीन रस कोक में दोऊ । राजहंस गति घटि नहि कोऊ ॥१४॥

दोहा ।

रूप मदन रस मोद को सहज जुगल बर देह ।
बैठे प्यार की सेज पर भरे मोद मृदु नेह ॥१५॥
एक रंग रुचि एक वय एक प्रान है देह ।
पलु पलु हिय हुलसत रहत अरुझे सरस सनेह॥

चौपाई ।

सब बिधि नागरि नवलकिशोरी। सील सुभाइ नेह निधि गोरी ॥ १७ ॥ अति गंभीर धीर रस

बाला। परम सलज्ज रूप की माला ॥१८॥ नवल रँगीली राजत खरी। रंगलता रसभाइन भरी ॥

दोहा।

कोमल कुन्दन बेलि मनु सींची रंग सुहाग ।
मुसकनि लागे फूल फल उरज भरे अनुराग॥२०॥

चौपाई।

बरषत छबि बरषा सी माई। चातिक लाल न पिवत अघाई ॥ ११ ॥ आतुर प्रिय आधीन अधोरा। जाँचत रहत दसन बर बीरा ॥ २२ ॥ छिन छिन नई नई छबि औरै। सुधि नहि रहन देत सिरमौरै ॥ २१ ॥ जिहि अँग घोर परै मन जाई। छुटै न तहँ तें रहे लुभाई ॥२४॥

दोहा।

ज्यौं ज्यौं सर में जल बढ़ै कमल बढ़ै तिहि भाँति।
ऐसे पिय की रुचि बढ़ै निरखि प्रिया तन काँति॥

चौपाई।

अद्भुत सहज माधुरी अङ्गा। चितै रीझि भरि लेत उछङ्गा ॥२६॥ झटकनि लटकनि की छबि न्यारी। यह सुख जानत देखनहारी॥२७॥

चितई नेकु चपल भ्रूभङ्गा। काँपत लाल सकल अँग अङ्गा ॥ २८ ॥ बचन सगर्ब सुनत हुंकारा। प्रीतम देह न रही सँभारा ॥ २६ ॥ बिबस भये विरहज दुख भारी। लटकि परे गहि चरन बिहारी ॥ ३० ॥ प्रेम-प्यार की मूरति प्यारी। लिये लाल भरि कै अकवारी ॥३१॥ रही लाइ हित सों उर ऐसे। खची नीलमनि कञ्चन जैसे ॥ ३२ ॥

दोहा।

बदन कमल सुठि सोहनो रस भरि अधर सुरंग।
पलु पलु प्यावति लाड़िली उठत सुगन्ध तरंग ॥

चौपाई।

अधरनि रस सींच्यौ जब बाला। फूल्यौ मन मनु मैन तमाला ॥३४॥ अति सुकुमार केलि रँग भीने। छिन छिन उपजत भाइ नवीने ॥ ३४ ॥ प्रबल ओप बाढ़ी दुहुं माहीं। रस सम तूल कोऊ घटि नाहीं ॥३६॥ सुरति समुद्र परे दोउ प्यारे। अम्बर लाज दूरि करि डारे ॥ ३७ ॥ भूषन सब दूषन करि जाने। तन मन एक होइ लपटाने ॥

दोहा ।

सुख वारिध में परतहो गए छूटि पट नेम ।
मेंड़ तहाँ कैसे रहै उमड़त हैं जहँ प्रेम ॥३६॥
बढ़ी तृषा निज केलि की रस लम्पट न अघात।
चरन छुवत हाहा करत रीझि रीझि बलि जात॥

चौपाई ।

अति उदार नागरि सुकुमारी । पिय रुचि जानि केलि बिस्तारी ॥ ४१ ॥ रति विपरीत विलसत बहु भाँतिनि । चूमत अधर नैन मुसकातिनि ॥४२॥ रस के बस ह्वै रस में भूली । वात नेम कौने सब भूली ॥४३॥ बिरमि बिरमि बानी पिय बोलै । श्रमित जानि अञ्चल झकझोलै ॥

दोहा ।

नायक तहाँ न नायिका रस करवावत केलि ।
सखी उभै संगम सुरस पिवत नयन पुट झेलि ॥

चौपाई ।

तजि मरजाद बिलासहिँ करहीं । रतिजुत मदन कोटि दुति हरहीं ॥४६॥ आलिङ्गन चुम्बन जब दये। अंगनि के भूषन अँग भये॥४७॥ अञ्जन

अधर पीक लगि नैननि । सुख में कहत अटपटे बैननि ॥ ४८ ॥ आनँद मोद बढ़्यौ अधिकाई । बिच बिच लाल बिबस ह्वै जाई ॥४९॥ दुहु मन रुचि एकै ह्वै जबहीं । सुख की बेलि बढ़ै ध्रुव तबहीं ॥ ५० ॥ गौर स्याम अँग मिलि रहे ऐसे । सौसी रँग झलकत तन तैसे ॥५१॥ रस की अवधि इहाँ लौं माई । विवि तन मन एकै ह्वै जाई ॥

दोहा ।

एक रंग रुचि एक वय एकै भाँति सनेह ।
एकै सील सुभाव मृदु रस के हित है देह ॥५३॥

अरिल्ल ।

चहूँओर रहि छाइ प्रेम के प्यार सौं ।
पिय त्रिय सौं रहि लाइ हिये के हार सौं ॥५४॥
तिनके रस की बात कही नहि जात है ।
जानति नाहिन राति कीधौं ध्रुव प्रात है ॥

चौपाई ।

मादिक मधुर अधर रस प्यावै । नैन चूमि नासा चटकावै ॥५६॥ ऐसे जतननि पियहि जगावै । रति नागरि रति-केलि बढ़ावै ॥ ५७ ॥

अधरनि दसन लगे जब जाने। रोम रोम रति पति सरसाने ॥ ५८ ॥ देखि रसिक रति रीझि भुलानी। हियो खोलि पिय हिय लपटानी ॥

दोहा।

प्यावति प्यारी प्यार सों प्रेमरसासव-सार ।
त्यों त्यों प्यारेलाल के बाढ़त तृषा अपार ॥५९॥

चौपाई।

सुख-सरिता उमड़ी चहुंओरैं। झलमलात सोभा तन गोरैं॥ कंचुकि दरकि तनीं सब टूटी। लगबगि अलकैं सोभित छूटी॥ श्रमजलकन दुति कहा बखानों। छवि के मोती राजत मानों॥ रतिविलास की उठत झकोरैं। चलत दृगञ्चल चञ्चल कोरैं॥ सुखसर में दोउ करत कलोलैं। मानों छवि के हंस कलोलैं॥ ऐसो उमड़ि महा रस ढरो। मनों प्यार की बरषा करो॥ रस फिर गयो दुहुन पर माई। भूली तन गति रति न भुलाई॥ ६६ ॥

दोहा।

लाल तृषा को सिन्धु है प्रेम उदधि सुकुमारि।
इकरसप्यावतपिवत दोउ मानत नहि कोउ हारि॥

चौपाई।

होत विवस जबहीं पिय प्यारी। सावधान तहँ सखि हितकारी॥ कुंवरि अधर पिय अधरनि लावै। रूप बदन नैना दरसावै॥ पिय के कर लै उरज छुवावै। मनहु मैन के खेल खिलावै॥ उर सों उर मिलि भुजनि भरावै। चरन पलोट सेज पौढ़ावै॥ ऐसी भांतिन लाड़ लड़ावै। ताहा सों अपनो ज्यो ज्यावै॥ ७२॥

दोहा।

प्रेम-रसासव छकि दोऊ करत विलास विनोद।
चढ़त रहत उतरत नहीं गौर स्याम छवि मोद॥

चौपई।

मेड़ तोरि रस चल्यो अपारा। रही न तन मन कछु संभारा॥ सो रस कहाँ कहा ठहरानो। सखियन के उर नैन समानो॥ तिहि अवलम्बि सबै सहचरी। मत्त रहत ठाढ़ी रँग भरी॥ या रस की जाकों रुचि रहै। भाग पाइ सो कछु इक लहै॥ सखियनि सरन भाव धरि आवै। सो

या रस की स्वादहि पावै ॥ छाड़ि कपट भ्रम दिन दुलरावै । ताको भाग कहत नहिँ आवै ॥ रति-मंजरी रँग लागै जाके । प्रेम कमल फूले हिय ताके ॥ यह रस जाके उर न सुहाई । ताकौ संग वेगि तजि भाई ॥ ८१ ॥

दोहा ।

या रस सों लागौ रहै निसदिन जाकौ चित्त ।
ताकौ पदरज सीस धरि बन्दित रहु ध्रुव नित्त ॥

इति श्री रतिमंजरी सम्पूर्णा ॥

अथ बनविहारलीला।

दोहा।

रसिक नृपति हरिवंश जू परम-कृपाल उदार।
राधा-वल्लभलाल यश कियौ प्रगट संसार ॥१॥
बनविहार छवि कछ कहौं सोभा बढ़ी विसाल।
मानो व्याहन चढ़े हैं राधावल्लभलाल ॥ २ ॥
मौरी मौर जराव की अरु मोतिन के हार।
दुलहिनि दुल्लह अति बने रूप सींव सुकुमार ॥
फूलनि के बनें सेहरे झलकत प्रगट सुहाग।
वसन सुहाने फबे तन मनों पग्यो अनुराग ॥४॥
नखसिख लौं भूषन सजे फबे छबीली भांति।
झलमलात अँग अंग प्रति मनि रतननि की काँति॥
कहा कहौं बानिक बनक सुन्दर परम उदार।
चरनन तर लोटत विवस निरखि रूप सिंगार॥
जुरी बरात सखीन की कोटिन जूथ अपार।
उमड़े छवि के सिन्धु द्वै मनु दूलह सुकुमार॥
सबके सीसनि रहे फवि सीसफूल की पांति।
मनो छत्र सिंगार के झलकि रहे बहु भांति॥

किङ्किनिधुनि मनु दुन्दुभी बाजत है चहुंओर ।
जहां तहां आनन्द भरि नितत मोरी मोर ॥९॥
अंगनि छवि भूषन झलक फैलि रही बन माहिँ ।
सखि मराल दुति जहां लगि निरखत सबै लजाहिँ॥
छाड़त छवि की फुलझरी मदन हवाईदार ।
निसि तें मानों दिन भयो कोटि भानु उँजियार॥
छूटत अलौकिक भोंचपा जहँ तहँ फैला जोति।
कञ्चन को वरषा मनो वृन्दावन में होति ॥१२॥
कुंज कुंज ऐसे बने मानो मत्त मतंग ।
लागेही जनु पवन के नितत लता तुरंग ॥१३॥
फूले द्रुम फूली लता फूले जहँ तहँ फूल ।
बहुत रंग वृन्दाविपिन पहिरे मनों दुकूल ॥१४॥
उज्जल परम सुगन्ध अति नव कपूर की धूरि ।
बढ़ो धूंधि कहत न बनै रहे अकास सब पूरि ॥
वरषा रूप सुहाग को वरषत बन चहुँओर ।
जहां तहां आनन्द भरि नितत मोरी मोर ॥१६॥
ऋतुराज पखावज लिये वीना सरद प्रवीन ।
ग्रीषम ताल रसाल धरि पावस छाया कीन ॥

कीर कपोती भँवर पिक करत मधुर सुर गान ।
भीँजि सब आनन्द रस उपजत नव नव तान ॥
उग्यो गुलाल सुरंग बहु सब बन छयो सुहाग ।
मानों द्रुम द्रुम ते भयो प्रगट रंग अनुराग॥१९॥
कोलाहल सब द्विजन को तहां नाहिने थोर ।
श्रवनन सुनियत नाहिँ कछु ऐसो ह्वै रह्यो सोर॥
चौँर चलनि सखियन करन धुज पताक बहु रंग ।
सोभा को सागर बढ्यो मानो उठत तरंग॥२१॥
फूल फूल भूली फिरै देखत जहँ तहँ फूल ।
झलमलाति दीपावली मनि-मै जमुनाकूल ॥
कुंज कुंज उँजियार मनु कोटिक भान प्रकास ।
मन्द सुगन्ध समीर बह सब बन भयो सुवास ॥
बन्दीजन सब खग मनों कहत हैं बिरद रसाल ।
गावत रागिनी राग मिलि गुहि रागन की माल॥
करत चतुरई चित्र फिर भीनी रँग अनुराग ।
उज्जलता को सँग लिये बँधो प्यार को ताग ॥
कुंज महल रतनन खचो कीने चित्त रसाल ।
चहूँ ओर रहि झलकि के झालरि मोतिन लाल॥

भूमि रही फूलनि लता बहु विधि रंग अनेक ।
फूले आनँद रंग भरि निर्तत केकी केक ॥२७॥
ललितादिक निज सहचरी जुरी तहां सब आनि।
कोलाहल आनन्द को कहँ लगि सकों बखानि॥
बेंदी सेज सुदेस रचि फूलनि आसन वानि ।
नव दुलहिनि दूलह नवल बैठाये तहँ आनि ॥
सखियनि अञ्चल दुहुनि के लै गठजोरा कीन ।
मिलवाई ग्रीवनि भुजा मानों भाँवर दीन ॥३०॥
सोभा भुव तिहि समै को वरनें ऐसो कौन ।
रसना कोटि सरस्वती तऊ रहै ह्वै मौन ॥३१॥
झीने अञ्चल में चपल कजरारे दोउ नैन ।
निरखत पिय व्याकुल भये गह्यो आनि मनमैन॥
अतिसलज्ज सुकुमारि रहि नखसिख लों सब ढाँपि।
छुयो चहत छुइ सकत नहिँ उठत कुंवर कर काँपि॥
सखियन के उर फूल भइ दूधा भातो हेत ।
ऐसें बैठी मुरि कुंवरि अञ्चल छुवन न देत ॥३४॥
सखियन कीनें जतन बहु जुरवाये चख चारि ।
रहिगये चितवत चित्र से मोहन बदन निहारि॥

निरखत छवि को ससिबदन बाढ़ो फूल अपार।
सुन्दर मुख दिखरावनी पहिरायो हित हार॥३६॥
घूंघटपट के छुवतहीं मुरि बैठी सुकुमारि ।
रसिकलाल पायनि परत सकत न धीरज धारि॥
समुझि दसा पिय की तबहिं चितई कछु मुसकाइ।
फूल्यो पिय को हिय कमल सो सुख कह्यो न जाइ॥
नेकुहिँ घूंघट के खुलत भयो प्रकास सत चन्द ।
भई किशोर चकोर गति परे प्रेम के फन्द॥३८॥
रतनन के भाजन विविध धरे सेज ढिग आनि।
मधु मेवा फल अमृत मे भरि भरि राखे बानि॥
सोंधौ पान सुगन्ध बहु रचि रचि धरे बनाइ ।
सखियन कौं सुख कह कहौं तिहि रस रही समाइ॥
मंगल रैनि सुहाग को गावत सखी प्रवीन ।
प्रथम बिलास अनंग रस बाढ्यो रंग नवीन॥४२॥
लई लाड़िली अङ्क भरि कहा कहौं आनन्द ।
मानों छवि को चन्द्रिका लीनो गहि छवि चन्द॥
बढ़ि गयो ऐसो प्रेमरस बिदा लाज को कीन ।
चितवनि मुसकनि सहज की बतियन माहिँ प्रवीन॥

कोक विलास कलानि में दोऊ प्रिय समतूल ।
कहा कहौं तिहि समै को बाढ़ो जो उर फूल ॥
वरविहार रसरंग में नागरि परम उदार ।
सींचत पियहि पियारजल लालच लाल निहार॥
नवल रँगीलो रँगभरी रँग भरि मोहनलाल ।
बढ़ी दुहुनि के होय ते केलि की बेलि रसाल॥
बतबतात मुसकात दोउ अति छबि सों लपटाति।
गौर स्याम तन रहे मिलि अँग में अँग झलकात॥
दसनाचल अञ्जन लग्यो पलक पीक रस सार ।
दियो बदलि अनुराग के अधरनि को सिंगार ॥
वार निहारनि की अरुझ तन मन की अरुझानि।
मानो हासि सिंगार दोउ मिले आपु में आनि ॥
निसि बीती सब रंग में उठे भोर सुकुमार ।
सखी सबै अति सोहनी राजत संग अपार॥५१॥
सुरँग सुहानो तिलक पर सुरँग चूनरी पाग ।
बाहांजोरी फिरत दोउ भीने रँग अनुराग ॥५२॥
लै लै फूल सुरंग पिय प्रियहि बनावत जाल ।
अंगनि उरजनि छुवन कों अति आतुर ललचात॥

देखि विपिन जमुनापुलिन ढरे कुटी की चोर ।
सोभा आवन चलन फिरन जो ध्रुव कहै सु थोर॥
द ह कहे पचास पर चारि बिचारि निहारि ।
राधा वल्लभलाल यश पलु पलु ध्रुव उर धारि ॥
बनविहारलीला कहो जो सुनिहै करि प्रीति ।
सहजहि ताके उपजिहै वृन्दाबनरस रीति ॥५६॥

इति आवनविहारलीला सम्पूर्णा ।

अथ रंगविहार लिख्यते।

दोहा।

राजत छवि सों रगमगी रगमगि सहज सिँगार।
बैठि रगमगी सेज पर रगमगि रूप अपार ॥ १ ॥
सखी एक दई आरसी ललित लाड़िली पानि।
तिहिछिनपियकौमनपर्यौ है छवि कै बिच आनि॥
बढ़ी अधिक सोभा झलक कुञ्जभवन रह्यौ छाइ।
मानो कोटिक रूप के चन्द उदै भये आइ ॥३॥
निरखि माधुरी सहज की नैन न मानत हारि।
बढ़ी जहां रुचि की नदी धीरज कूल बिदारि॥
प्रिय प्रवीन रस प्रेम में चितवत भौंहनि भाइ।
जिहँ छन जैसी होत रुचि जानत त्योंहि लड़ाइ॥
छिन छिन औरै और छवि पल पल में गति और।
नागर सागर रूप के परमरसिक सिरमौर ॥ ६ ॥
कबहुं लाड़िली होत पिय लाल प्रिया ह्वै जात।
नहिँजानत यह प्रेमरस निसदिन कितहिबिहात॥
सुरँग चूनरी एक में रँग भीने सुकुमार।
लपटे ऐसी भांति सों नहिँ समात बिच हार ॥

इन्द्र नीलमनि पिय प्रिया कोमल कुन्दन बेलि।
लसत छबीली भांति सों सुरत समर कल केलि॥
लाल मगन मुख सेज पर लटकत रही सँभारि।
रति नागरि अधरन-सुधा प्यावत बदन निहारि॥
नैन कटोरी रूप की भरी प्रेम मदमोद।
अद्भुत रुचि पीवत बढ़ी आनँद रँग दुहुकोद॥
अंगनि की छबि माधुरी निरखतहूं न अघाहिं।
नैन भँवर भूले फिरैं रूप कमल बन माहिं॥१२॥
ऐसो छिन ह्वैहै कबहुं कुंवरि अंक भरि लेहिं।
दसन खण्डि अति हेत सों हँसि मुख बीरी देहिं॥
यहै सोच रहै चित्त में भूषन बसन बनाइ।
पहिराऊँ अपने करनि रहें रीझि सुख पाइ॥१४॥
यद्यपि पिय देखत रहें मन को सोच न जाइ।
कैसहुं एकहु बार ए देखि नैन अघाइ॥ १५॥
अति आसक्त सनेहवस मोहनरूप निधान।
तजि स्यानप राख्यौ न कछु अरपे तन मन प्रान॥
सौरभता सुकुमार की जब पावत सुकुमार।
फैलि परत जनु प्रेमरस रहत न देह सँभार॥

अतिहि विवस ह्वै जात पिय ऐसी भांति अनूप।
सुनि सखि तब ह्वै है कहा जबहिं देखिहै रूप॥
अधरनि अंगनि परसिबौ तिनको यहै उपाय।
चितवनि अति अनुराग की लेत है पियहिं जगाय॥
छिन छिन माहिँ अचेत ह्वै पल पल माहिँ सचेत।
नहिँ जानत या रंग में गए कल्प जुग केत॥
एक लाड़िलो लाल में अद्भुत सरस सनेह।
रुचि तरंग पल पल बढ़ै बरषत रस को मेह॥
बरषत रस को मेह बढ़ी सुख सरिता भारी।
मुसकनि मनु छवि कमल अँग फूलनि फुलवारी॥
हावभाव अंकुर नये उपजत रंग अनेक।
हित ध्रुव हित सों बात करि तनमन भे दोउ एक॥
अलक लड़ो मुख लाड़िली अद्भुतरूपनिधान।
मोहि रहे मोहन निरखि भूलें सबै सयान॥२२॥
तिनके रूपहि कहन कों कतिक बुद्धि है मोर।
रस गुन सींवा रूप की बँधे नैन की कोर॥२३॥
अति सुरंग मोतिन सहित बनी माँग रुचि दैन।
मनो हास अनुराग मिलि राजत रसपति ऐन॥

छबि रहि गौर ललाट पर बेंदी की झलकानि ।
मनि अनुराग सुहाग की मानों प्रगटी खानि ॥
उज्जल स्याम सुरंग दृग सने सनेह सलोन ।
बार बार परसत रहैं चञ्चल श्रवननि कोन ॥२६॥
कहि न सकत नासा वनक उन्नत सुमिल अनूप ।
चितवत मोती की छबिहि भूल्यो रूपहि रूप ॥
मधु मैं अधर सुरंग मृदु छबि सीमा सुकुमारि ।
दसननि पंकति जोति पर दामिनि अगनित वारि॥
उपमा सुन्दर चिबुक की सकत न उर में आनि ।
सोभा निधि अद्भुत मनो हरि मन हीरा-खानि॥
मुसकनि आनँदफूल मनु चितवनि सुख की सींव।
है लर मोतिन पोत छबि झलकि रही मृदुग्रीव॥
उरजनि की छबि कहँ कहौं तसो झलकनि होय।
भूलत नहिँ मन के करनि धरे रहत हैं पीय ॥
तन सों सारी मिलि रही सोंधे सनी सुरङ्ग ।
मानों सोभा छाइ रहि झलमलात अँग अङ्ग ॥
रसभीनी झीनी बनी अँगिया गोरे गात ।
अतिसुदेश गाढ़ी कसनि लसत ललित उरजात ॥

प्रीतम कौ चित मीन मनु पर्‍यो नाभि ह्रद माहिँ।
अति स्वादी सुख स्वाद रस कैसेहुं निकसत नाहिँ॥
नखसिखलौं दोउ उरभि रहि नेकहु सुरभत नाहिं।
ज्यौं ज्यौं रुचि बाढ़ै अधिक त्यौं त्यौं अति उरभाहिं॥
जे हरि रीभे नूपुरनि निमिष न छाड़त पाइ ।
पायल सुख की रासि तहँ ते हरि रहे लुभाइ ॥
चरननि हित जावक लिये ललन रहे अति सोहि।
चित्र करत चितचित्र भो छबि चरित्र रहे जोहि ॥
चाहि रहे छावत चखनु बढ्यौ प्रेम कौ प्यार ।
रुचि प्रवाह में पर्‍यौ मन चूमत बारम्बार ॥३८॥
रसभरि चितवनि हेत की रँग भीनी मुसकानि।
जावनि कौ सुख सहज फल यहै लेत पिय मानि॥
पुनि फिरि प्यारी प्यार सौं रमकि लिये उर लाइ।
देखत सुख हिय दुख भयौ नैननि जल भरि आइ॥
गहि कपोल सुन्दर करनि नैननि नैन मिलाइ।
अधरनि रस प्यावत पियहिँ लाज नेम बिसराइ॥
छुटी मूर्छा चेत भो चितवत मुख की ओर ।
रटत पपीहा तृषित जनु व्याकुल चकित चकोर॥

चरन कमल को निज महल तहाँ बसत मम प्रान।
इतनो नातो मानि कै देहु अधररस पान ॥४३॥
हारी प्यारी देत रस पिय पीवत न अघात ।
देखि लाड़िली लाल रुचि रीझि रीझि मुसकात॥
करुनानिधि मृदुचित्तअति उरजनि सों रहि लाइ।
लज्जित ह्वै रहि विवस तहँ मदनकोटि सिरनाइ॥

सोरठा ।

पिय सों कहै जु बात, अलबेली अति फूल सों।
हँसि मृदु उर लपटात, पिय कै जीवनि यहै सुख॥

दोहा ।

प्रेम-रासि दोउ रसिकवर, एक वेस रस एक ।
निमिष न छूटत अंग सँग यहै दुहुनि की टेक ॥
अद्भुत गति सखि प्रीति की, कैसेहु कहत बनै न ।
थोरेहु अन्तर निमष को, सहि न सकत पिय नैन॥
स्याम रंग स्यामा रँगी, स्यामा कै रँगि स्याम ।
एक प्रान तन मन सहज, कहिबे को है नाम ॥
सखियनि के नैना रँगे, नवल बिहार सुरङ्ग ।
माती नेह अनंद-मद, दम्पति केलि अनङ्ग ॥५०॥

प्रेम मदन-रस नैन भरि हियौ भर्‌यौ आनन्द ।
सुरत रंग के रंग रँगि, विवि वृन्दावन चन्द ॥
रस समुद्र दोउ लाड़िले, नव नव भाव तरङ्ग ।
तामें मज्जन करत रहि, ध्रुव दिन मनहि अनङ्ग ॥
अद्भुत रंग विहार जस, जो सुनिहै चित लाइ ।
रसिक रँगीले विवि कुँवर तिहि उर झलकहिं आइ ॥
छप्पन दोहा कहि ध्रुव, रंग विहार अनङ्ग ।
या रस में जे रँगि रहे, तिनही सों करि सङ्ग ॥

इति श्रीरंगविहार सम्पूर्णम् ।

अथ रसविहार लिख्यते ।

दोहा ।

रूप नदी करिया मदन नवल-नेह की नाव ।
चढ़े फिरत दोउ लाड़िले छिनछिन उपजत चाव॥
रसविहार कछु प्रगट कहुं सुनहु रसिक चितलाइ।
नावनि चढ़ि बनविहरिबौ यह उपजो उर आइ॥
कञ्चन की रतननि खची रची अनेक अनङ्ग ।
जमुना जल में झलकि रहि गुमटी नाना रङ्ग॥
मनि-मै छत्री सबनि पर रही अधिक झलकाइ ।
कहुं कहुं फूलनि की लता रहि गइ सहज सुभाइ॥
नाव बनाव जु कहन कौं ऐसी मति धरै कौन।
कुन्दनि के हीरनि खचे दुखने तिखने भौन॥५॥
लै लै कञ्ज गुलाब दल आसन सेज रचाइ ।
अम्बर अरगज सों छिरकि राखी सखिनि बिछाइ॥
तापर रसिकनि रसिक दोउ नागर नवलकिशोर।
अवलोकत मुख माधुरी जैसे चन्द चकोर ॥७॥
ललितादिक निज सहचरी तेई राजत पास ।
आनँद के अनुराग रँगि लूटत सुख की रास॥८॥

और सनेहनि पर चढ़ी लीने सोंध सिँगार ।
चन्दन बन्दन अगरसन और विविध उपहार॥८॥
एकनि पै पाननि डबा एकनि के कर चोर ।
रससुगन्ध-भींजी सबै भ्रमत चहूँदिसि भोर ॥
जहँ तहँ जल में झलमलै अंगनि भूषन जोति ।
मानों बरषा रूप की कालिन्दी में होति ॥११॥
भूलि रही नहि कहि सकति मति की गति भइ पंग।
कोटि भान ससि कमल मनु जुरे आइ इक संग॥
अति प्रवीन सब सहचरी रँगी राय के रङ्ग ।
कोउ बीना कोउ सारँगी कोउ लिये हुडुक मृदङ्ग॥
एक लिये किन्नर मुरज एक तार कठतार ।
सरस एक तें एक सखि गुन की अवधि अपार ॥
एक मधुर सुर गावहीं अद्‌भुत बाँकी तान ।
रीझि लाड़िली लाल दोउ देत सबनि को पान॥
चलनि फिरनि छवि कहँ कहों नैना रहे लुभाइ ।
मानो रूप छटानि के लइ रविजा सब छाइ ॥
सुरँग सुगन्ध गुलाल अति सखियनि दियौ उड़ाइ।
अम्बर मनु अनुराग कौ तिहि छिन लियो उढ़ाइ॥

कुसमनि के गेंदुक लिये खेलत दोउ सुकुमार ।
आलिंगन चुम्बन चपल छुवत उरज उर हार ॥
हावभावचितवनिचपल बिभ्रविचिमृदुमुसकानि ।
अतिविचित्रघटिनाहिकोउकौककलनिकौखानि॥
जबहिं कुँवर नीवी गहत भौंह-भङ्ग ह्वै जात ।
वेपथु बात न कहि सकत पटकमलनि लपटात ॥
दीखि दीन आतुर पियहि ह्वै कृपाल रस ऐन ।
अधर सुधा प्यावत पियहि जुरे नैन सों नैन ॥
रसबिहार के सुनतहीं उपजै जिनकै रंग ।
हित ध्रुव तौ जाँचत यहै तिनिहीं सों होइ संग॥

इति श्रीरसविहार सम्पूर्णम् ।

अथ आनन्ददसाविनोद ।

दोहा ।

प्रथमहि श्रीगुरु कृपा तें नित्य विहार सु रङ्ग ।
बरनौं कछु इक यथामति दम्पति केलि अनङ्ग॥
तीनि रङ्ग की नायिका बरनी कोककलानि ।
प्रिया चरन उर में धरैं ठाढ़ी जोरैं पानि ॥ २ ॥
नौढ़ा मध्या अति चतुर प्रौढ़ा परम प्रवीन ।
कुँवरि चरनि नख चन्द्र-कनि सेवत ज्यों जलमीन॥
एकहि वहि क्रम नाहि कछु सहज अलौकिक रीति।
विलसत विविधि विनोद रति उपजावत निज प्रीत॥
अपनी अपनी समै सब रुचि लै करि अनुसार।
फिरत रहैं छिन छिन नई आनँददशा विहार ॥
कहा कहौं छवि माधुरी छिन छिन चाह नवीन ।
अद्भुत सुख में मधुर मृदु प्रेम मदन रस लीन ॥
पल पल औरे और विधि उपजत नव नव रंग ।
सब अंगनि को देत सुख यह कौतुक बिन अंग॥
प्रेमसिन्धु उमड़े रहैं कबहूँ घटत जु नाहिँ ।
तिहँ सुख को सुख कह कहौं जो उपजत दुहुमाहिँ॥

प्रथमहिँ नौधा की दसा रुचि लै प्रगटी आइ ।
नखसिख अम्बर लाज को मानौं लिये उठाइ ॥
नमित ग्रीव छवि सींव रस अंग छुवन नहिँ देत ।
आतुर पिय अनुराग वस मृदु भुज भरिभरि लेत॥
चाहत उरजनि छुयो जब उठत नवल कर काँप ।
समुझि लाड़िली जोरिकर करकमलनि रहै ढाँपि॥
परम चतुर चञ्चल सहज चञ्चलमैं दोउ नैन ।
रोम रोम पिय के बस्यौ निरखि प्रेमरस मैन ॥
भये अधीर अधीन अति कहि न सकत कछु बात।
फिरिफिरि पायनि में परत मृदुमुख हाहा खात॥
यह गति देखत पीय की चितई कछु मुसकाइ।
करुना करि चूमत मुखहि अधरसुधारस प्याइ॥
लटकि लाल उर सों लगी उपजे अगनित भाइ।
वचन रचन सुख कह कहौं प्रीतम रहे लुभाइ॥
हावभाव में अतिचतुर रतिविलास रसरासि ।
चञ्चल नैनन चितवनी करत मन्द मृदु हासि ॥
लिये लाल अति प्यार सों उरजनि विच भुजमूल।
रुचिप्रवाह में परे दोउ तजि कै लाज दुकूल ॥

प्रेममदन रसरंग धरि भरे रहत विवि हीय ।
लपटे ऐसी भांति सों है तन मन इक कीय ॥
अंग अंग मन मन मिले प्रेममदन रससार ।
ऐसे रङ्गविहार पर ध्रुव कीनों बलिहार ॥ १९ ॥
विवस लाल सुख रंग में रही न देह-सँभार ।
प्रगट भई प्रौढ़ा दशा जाकी प्रेम अपार ॥ २० ॥
लिये अङ्क भरि प्यार सों उरजनि सों रहि लाइ ।
सावधान कीनें तबै नासा पुट चटकाइ ॥ २१ ॥
परिरम्भन चुम्बन अधिक आलिङ्गन बहु रीति ।
रतिविपरितविलसतविविध लिये मीत रस जीति॥
बङ्क कटाक्षनि हरति मन बिच२ मृदुमुसकानि ।
पियकि उर पर लसत मनु छवि दामिनि झलकानि॥
श्रमजलकन मुख गौर पर अञ्जन लसत सुदेस ।
कहा कहौं छवि सहज की छुटे सगबगे केस ॥
पीक कपोलनि फवि रही कहुं कहुं अंजन लीक ।
मनु अनुराग सिँगार के चित्र रचे रति नीक ॥
जेती कोककला कही अद्भुत प्रेम अनङ्ग ।
छिनछिन औरै और विधि उपजत अङ्गनि अङ्ग ॥

प्रेम चाह रससिन्धु में मगन रहत दिन रैन ।
उर सों उर अधरनि अधर जुरे नैन सों नैन ॥
रससमुद्र गहरे परे तृपित होत तउ नाहिँ ।
नैन मीन ललितादिकनि तरत फिरत तिहँ माहिँ॥
न्यारीन्यारी दसा कहि एक स्वाद हित जानि ।
जैसें एकहि बात के कीजै विंजन बानि ॥ २९ ॥
रतिविलासरस सींचिकरि स्मर विनोद बहु भांति ।
आतुरता पियदृगन की निरखि कुंवरि मुसकाति॥
निरखिनिरखि ऐसे सुखहि सखी सबै बलि जाति।
उनहूं तें फूली अधिक आनँद उर न समाति ॥
सहजहि सील सुभाव मृदु रहि प्रसन्न सब काल।
एक लाल सुख-स्वादहित करि बिलास नव-बाल॥
प्यारी भौंहनि चितै रहि परमरसिक सिरमौर ।
चलत भावती रुचि लिये रुचत नहिन कछु और॥
रुचि रुचि रस के रचे रुचि मानों प्यारी पीय ।
सहज प्रेम के रँग रँगे है तन मन इक जीय ॥
दीबे कों राख्यो न कछु अति उदार सुकुमार ।
अधरसुधा प्यावत पियहिँ मुख-छवि रही निहारि॥

अति प्रवीन सब अंग में जानत बहुत लड़ाइ ।
सुखसमुद्र में लाड़िली लिये लाल अन्हवाइ ॥
रुचिफुलवारी फुल रही प्रीतम के उर ऐन ।
सींचत प्यारी प्यारजल चितवनि मुसकनि सैन॥
अलक लड़ी पिय पै लटकि प्यारहि सों भुज डारि।
यातें चित्त से ह्वै रहे जिन भुज लेहु उतारि ॥३८॥
अंग अंग छवि माधुरी निरखत पिय न अघाइ ।
देखि लाल के लालचहि लालचहूं ललचाइ ॥
कहा कहौं या प्रेम की पिय के गति नहिं आन।
एक लाड़िली संगही जिनके जीवनप्रान ॥४०॥

कवित्त ।

अलबेली सुकुमारी नैनन के आगे रहै तब लगि प्रीतम के प्रान रहैं तन में । यह जिय जानि प्यारी पलहूं न होत न्यारी तिनहीं के प्रेम रंग रँगि रही बन में ॥ परमप्रवीन गोरी हाव-भाव में किशोरी नये नये छवि के तरङ्ग उठैं छन में । हित ध्रुव प्रीतम के नैन मीन रस लीन खेलिबो करत दिनप्रति रूप बन में ॥ ४१ ॥

दोहा ।

स्थूल मदनरस कछु कह्यो अब सुनि सूक्षम रङ्ग ।
जहां विराजत एक रस अद्भुत प्रेम अनङ्ग॥४२॥
भीने दोउ आसक्त रस तन मन रहि अरुझाइ ।
एक प्यारही दुहुन में रह्यो सहजहीं छाइ॥४३॥

कवित्त ।

प्यारही की कुञ्ज अरु प्यारही की सेज रचौ प्यारही सों प्यारेलाल प्यारी बात करहीं । प्यारही को चितवनि मुसकनि प्यारही को प्यारही सों प्यारोजी कौं प्यारी अङ्क भरहीं ॥ प्यार सों लटकि रहै प्यारही सो मुख चहै प्यारही सों प्यारी प्रिया अङ्क भुज धरहीं । हित ध्रुव प्यार-भरी प्यारी सखी देखि खरी प्यारे प्यार रह्यौ छाइ प्यार रस ढरहीं ॥ ४४ ॥

दोहा ।

चितवनि मुसकनि सों रँगे प्रेमरंग रससार ।
छके रहत मदमत्तगति आनँद नेह सिँगार॥४५॥
दरसन परसन उरज उर छुवनि कुचनि भुजमूल ।
पहरे पट दोउ प्रेम के बिसरे नेम दुकूल ॥४६॥

बूड्यौ मनै रस प्रेम भरि धीरज धरि सखि नाहिं।
नैन कमल झलके छुते तिरत रूप जलमाहिं ॥
फूल सुरंग अनुराग के उर उर में रहे फूल ।
मनों भँवर मन दुहुन के छवि सुगन्ध रहे भूल ॥
जोवनि मुसकनि चितइबो अधरसुधा सुखस्वाद।
लेत मधुप पिय मन मनों कोमल कमल सुवाद॥
पहरे दोउ अति फूल सों फूल-विलासन हार ।
केलिहु तहँ भारी लगत ऐसे दोउ सुकुमार ॥५०॥

कवित्त।

माधुरी को कुञ्ज ताके मोद की लै सेज रची तिहि पर राजै अलबेले सुकुमार री। रूप तेज मोद के जुगल तन जगमगै हावभाव चातुरी के भूषन सुढार री। नेह-नीर नैनन को सैनन में रहे भींजि कौन रस बाढ्यो जहां बोलिबोउ भार री। अतिही असक्ति सखी रही मोहि जोहि जोहि हित ध्रुव प्राननि को दूहई अहार री॥

दोहा।

रसही की मूरति दोऊ रसिक लाड़िली लाल।
रसही सों चितवत रहैं रसभरि नैन बिसाल.॥

पिय परसत भुज मूल कुच और उरज हिय हार।
बूड़ि जात मन रूप सर रहत न देह सँभार ॥
प्रेम नेम की दसा जिति उपजत आनँदि आन।
रसनिधान बिलसत रहै सुख की नहीं प्रमान ॥
और न कछू सुहाइ मन यह जाँचत निसि भोर।
या सुख घन सों लगि रहै ध्रुव लोइन दिन मोर ॥
यह सुख निरखत सखिन के आनँद बढ्यौ न थोर।
हेमलता फूली मनों झूमि रही चहुँओर ॥५६॥
छप्पन दोहा कहि ध्रुव आनँददसाबिनोद ।
रूपमाधुरी रँग रँगे परे प्रेमरसमोद ॥ ५७ ॥

इति श्रीआनंददशाविनोद सम्पूर्णम्।

अथ रंगविनोद ।

दोहा ।

प्रथमहिँ चितवनि लाज की दुतिय मधुरमृदु बैन ।
तृतिय परस अंगनि सरस उरजनि छवि सुखदैन ॥
परिरम्भन चुम्बन चतुर पञ्चम भाइनि रङ्ग ।
षटरस बिंजन स्वाद जिमि उठत अनङ्ग तरङ्ग ॥
विविधिभाँति रतिकेलि कल सप्त समुद्र अपार ।
वचन रचन अष्टम नवम रसनिधि रंगविहार ॥
क्रम सों कहि ध्रुव नवों रस मिटत न कबहुँ हुलास ।
ऐसो लाडिलो लाल को अद्भुत प्रेम बिलास ॥
अब बरनौं ज्योंनार कछु रस में रस-सिंगार ।
प्रीति-रसोई अति बनी प्रीतम जेवनहार ॥ ५ ॥
विविधि भाँति बिंजन सरस भये जु बहुत प्रकार ।
पानी पानिप अंग दुति पीवत बारम्बार ॥ ६ ॥
अधरसुधा मादिक मधुर पुट कपूर की हासि ।
बीचि सलोनी चितवनी बाढ़त रुचि सुख रासि ॥
कुञ्ज-सदन आनन्द रस दिखिबो आनँद रूप ।
हावभाव रसमाधुरी बिंजन बने अनूप ॥ ८ ॥

चाह छुधा रसना नयन प्यास तृषा नहिं थोर ।
परसति रति अतिहेत सों छबि स्वादहिँ नहिं वोर॥
आलिङ्गनवर कलपतरु सुरत रंग सुख मूल ।
इक रस फूल्यो रहत दिन चितवनि मुसकनि फूल॥
अतिसुगन्ध वचनावली बीरी मुख अनुराग ।
पौढ़े सहज प्रयङ्क पर ओढ़े चीर सुहाग ॥ १० ॥
वृन्दावन है प्रेम के फूले फूल अनूप ।
लोभुन अलि ललितादिकनि पीवत सौरभ रूप॥
परम-रसिक नागरि नवल राधावल्लभलाल ।
मुसकनि मन हरि लेत हैं चितवनि नैनविसाल॥
नव किशोर चितचोर दोउ अलबेले सुकुमार ।
भीने रंग सुरंग में रचि रहे प्रेमविहार ॥ १३ ॥
दुलहनि दूलहु रसमसे प्रेम रूप की रासि ।
नवल रँगीलो सेज पर करत हाँसि पर हाँसि ॥
अतिहि छबीले कुँवर दोउ करत रसीली बात।
मरमभेद कहि कहि कछू हँसि हँसि उर लपटात॥
कजरारे चञ्चल नयन छबि की उठत झकोर ।
को समुझै घन मेघ सुख बिना रसिक-सिरमौर॥

रदन-चिन्ह रति के सुरँग सोभित सुभग कपोल।
मनहु कमल के दलनि पर झलकत रतन अमोल॥
सुर-तरंग पर-सुख नहीं बातनि ऊपर बात ।
अधर पान पर रस नहीं परसन पर उरजात॥
लटकनि लटकनि रंग की चितवनि हाँसि विनोद।
यह सुख को समुझे सखी जो उपजत दुहुँ कोद॥
कोमल फूली लतनि में करत केलि रस माहिं।
तहँ तहँ की बल्ली सबै सकुच बिवस ह्वै जाहिं॥
बृन्दावन की लता द्रुम कुञ्ज सबै चिद्रूप ।
झनक झनक विहरत तहाँ दम्पति सहज स्वरूप॥
सौरभ अंगनि कहू कहीं स्वास सुवास अनूप ।
रोम रोम आनन्द निधि लखिवो पानिप रूप॥
फूलनि में दोउ फूल से सौरभ रूप सुरंग ।
ललितादिक पाछे फिरत भीनो तिनके रंग॥
धन्य धन्य सखियनि सुकृत देखत ऐसी भाँति।
जबहिं लाड़िली लाल-तन प्यार सहित मुसकात॥
जब देखी रस रँग ढरी बाढ्यो आनन्द हीय ।
रचि बनाइ मृदु अँगुरियनि बीरी खावत पीय॥

बिचिहिं लाल चाहत कयौ कुच-कच अरु भुज मूल।
अति प्रवीन मन में समुझि ढाँपति नील दुकूल॥
आतुर पिय अनुराग बस कहि न सकत कछु बात।
फिरि फिरि पाइनि में परत मृदु मुख हाहाखात॥
अति सनेह के रँग भरी रहि न सकी अकुलाइ।
लये लाल उरजनि तबहिँ अधर सुधारस प्याइ॥
कहा कहौं या प्रेम की बात कही नहिँ जाइ।
प्यारी मानौं पियहिं ले रखि प्यार मों छाइ॥
कुसल कोक की कलनि में उपजत अनि नित भाइ।
किय अधीन जलमीन ज्यौं सुरत के रसहिँ चहाइ॥
देखि प्रिया को प्रेम पिय मुख तन रहे निहारि।
नैन सजल अति विवस ह्वै रहे प्रान बपु हारि॥
बृन्दावन में सिन्धु है उमड़े रहैं अपार।
प्रेम मदन रस सौं भरे रंग तरंग सिँगार॥३१॥
मध्य पुलिन सज्या बनी सुन्दर सुभग सुढार।
विलसत स्यामा-स्याम तहँ सोभानिधि सुकुमार॥
प्रेम नेम रति-रंग सुख दिनहिं परस्पर होत।
पलु पलु नव नव रमि फिरैं सहजहिं ओतप्रोत॥

मदन लहरि के उठतहीं बाढ़त सुरत विहार
प्रेम लहरि में परतहीं रहत न देह सँभार ॥३४॥
अद्भुत जुगलकिशोर छबि छिन छिन औरै और।
प्रेममगन बिलसत दोऊ रसिकनि-मनि सिरमौर।
रंगम संगम सागरनि बाढ़त रुचि को तोइ।
या रस में ललितादिकनि राखे नैन समोइ॥३७॥
सखियनि को सुख कह कहों मेरी मति इति नाहिं।
यह रस उनकी कृपा तें जो रहै ध्रुव मन माहिं॥
भाग पाइ ठहराइ जो यह रस पारी प्रेम।
ताके हिय झलकत रहै गौर नील मनि हेम॥
मेरी तौ मति कौन है यह रस परस्यो जाइ।
एक लाड़िली लाल को सकतहिँ लेत बनाइ॥
दोहा रंगविनोद के रचि कीने चालीस।
सुने गुने हित सहित ध्रुव तिहि पदरज धरु सीस॥

इति श्रीरङ्गविनोद सम्पूर्णम्।

अथ नृत्यविलास ।

चौपाई ।

एक समै नागरि नवनागर । प्रेम रूप गुन के दोउ सागर ॥ हिलि मिलि प्रेमरंग रस चहहीं । परम प्रवीन सखी सँग रहहीं ॥ मण्डल जोरि चहूंदिसि ठाढ़ीं । प्रेम चितेरे चित्र सी काढ़ीं ॥ राजत भानुसरोवर तीरा । आवत परसि सुगन्ध समीरा ॥ सारस हंस चकोर चकोरी । निरतत फिरत बरह सँग मोरी ॥ देखि मुदित भई नवलकिशोरी । आनँद में झलकत मुख गोरी ॥ उपजी बात एक मनमाहीं । सकुचत हैं पिय कहि न सकाहीं ॥ कबहूं नुपुर धाइ बनावैं । याही मिस चरननि छ्वै आवैं ॥ कबहूं सुन्दर बीन बजावैं । नवल प्रिया मन रुचि उपजावैं ॥ निरखत सुख कहि सकत न प्यारी । हेत लाल को प्रिया बिचारी ॥ परम प्रवीन मुकटमनि प्यारी । निर्त्त-कला गुन को बिस्तारी ॥ तिरप बाँधि कमलनि पर चली । निरखत थकित रही हैं अली ॥

अद्‌भुत कमल मध्य सर माहीं। ताके सिर पर नृत्य कराहीं ॥ १३ ॥ दोहा।

निर्त्तविलासहिं देखि सखि रही सोचि विस्माइ।
निर्त्त जु भूरतिवन्तही ठाढ़ी लेति बलाइ ॥१४॥

चौपाई।

हुरका रबाब गजर बहु बाजै। सखियनि अति आनन्द सौं साजै ॥ किन्नर मुरज मृदङ्ग बजावैं। घत में घत नव नव उपजावैं ॥ अति सुकुवारि निर्त्त रँग भीनी। भाइ भेद गति लेति नवीनी ॥ जो गति सुनी न देखी कबहीं। नूतन प्रगट करी ते अबहीं ॥ अलग लाग हुरमई जु लीनी। प्रगट कला निज गुन की कीनी ॥ परत जु आइ मान जिहि दल पर। वैसेइ रहत चरन के तरहर ॥ लाघवता सौं पग रहै ऐसे। परसन होत दूसरे जैसे ॥ सुलप अनूप चारु चल ग्रीवा। सहज सुगन्ध विलास की सीवा ॥ थेई थेई कहत मोहनी बानी। सखियनि नैन चले ह्वै पानी ॥ मुसकनि मधुर चित्त को हरहीं। चितवनि पासि दूसरी परहीं ॥ २४ ॥

दोहा ।

निर्त्त सुढंग कला जिती कही प्रगट परमान ।
कुछ न तिनि में एकही उपजी आनहि थान ॥

चौपाई ।

पुनि केसरि परि लसति रँगीली । झलकति बेसरि परम छबीली ॥ कछुक अलाप मधुर कल कीनो । मति बुधि सबहिनि की हरि लीनो ॥ कबहुँ न सुनी राग-धुनि ऐसी । कीनी अबहिं कुँवरि सखि जैसी ॥ राग रागिनी जूथ लजाए । खोज रहे ते स्वर नहिं पाए ॥ भृङ्गी भृङ्ग सुनत मृदुबानी । थक्यौ पवन अरु चलत तपानी ॥ श्रवत द्रुमनि ते रस की धारा । आनँद प्रेम कियौ बिस्तारा ॥ रंग-पुञ्ज बरषत बरिषा सी । हित ध्रुव गुनसीवा गुणरासी ॥ ३२ ॥

दोहा ।

सुनत राग अनुराग धुनि मोहे नागर लाल ।
सकी न धीरज धरि सखी मरम लग्यो सरवाल ॥

कुण्डलिया ।

लाल बिवस सहचरि सबै मोरी मृगी बिहङ्ग ।
गावति रस में नागरी नव नव तान तरङ्ग ॥

नव नव तान तरंग सप्त-सुर सौं मन हरिहीं ।
ऐसी की सखि आहि सुनत उर धीरज धरिहीं ॥
नव नव गुन की सींव सब अति प्रवीन बर-बाल ।
नागर कुल-मनि तैसेई श्रोता सुन्दरलाल ॥३४॥

चौपाई ।

अति विह्वल ह्वै गए बिहारी । भूषन पट सुधि देह बिसारी ॥ रही सँभारि सखी हितकारी । नैननि होत प्रेम बरिषा री ॥ प्रिया प्रिया रव मुख ते निसरै । नाम रूप गुन कबहुँ न बिसरै ॥ यह गति देखि लाल की प्यारी । नेह रगमगी अति सुकुवारी ॥ महा प्रेम समझत उर घूमी । तिहिं छिन आइ लाल पर झूमी ॥ देखत बिवस भुजनि भरि लीने । चितै बदन नैना भरि दीने ॥ महा प्रेम सौं उर लपटानी । तिनकी प्रीति न जाति बखानी ॥ भरि अनुराग लाल उर लायौ । अधर सुधा जीवनि रस प्यायौ ॥ खुलि गए नैन प्रान घट चाए । प्रिया-प्रेम झकझोरि जगाए ॥ ललित लाल डोलत सँग लागे । प्रिया-प्रेम नखसिख लौं पागे ॥ ४४ ॥

दोहा ।

नखसिख सौं सखि पगि रहे प्रीतम प्रेम तरङ्ग ।
तिहीं भाँति पुनि लाड़िली रँगी लाल के रङ्ग ॥

कुण्डलिया ।

नागरि नृत्य विलासरस जो अवगाहत नित्त ।
हित ध्रुव अद्भुत प्रेम सौं रहै सरस दिन चित्त ॥
रहै सरस दिन चित्त और कछु सुन्यौ न भावै ।
बिन विहाररस-प्रेम और उर में नहिं आवै ॥
अंत सुखहिं की सींव सकल अंगनि गुन आगरि ।
प्रीतम मन हरि लेत सहज रस में नवनागरि ॥

इति श्रीनृत्यविलाससम्पूर्णम् ।

अथ रङ्ग-हुलास।

दोहा

सखी सबै सेवा करैं जिनके प्रेम अपार।
जैसी रुचि है दुहुँनि की तैसो करत सिंगार ॥
सौरभ सों तन उमड़ि कै मज्जन किय सुकुवारि।
अंगनिकीछविकोकहकहौंमतिरहिसुरतिबिसारि ॥
मुख तमोल की अरुनई झलकनि सहज सुहाग।
मनों कमल के मद्धि तें प्रगट भयौ अनुराग ॥
रची सचिक्कन चन्द्रिका फबि रहि मांग सुरंग।
मनु अनुराग सिंगार को सौंवा रची अनंग ॥
बेंदी नथ अरु तिलक पर सुरँग चूनरी सोहि।
निरखत है धीरज धरैं तऊ रही सखि मोहि ॥
चिलकनिकचचमकनिदसनचितवनिमुसकनिफूल
भरत रहै पिय लाल पर सुखनिधि आनँद मूल ॥
कजरारे उज्जल सुरँग अनियारे दोउ नैन।
उपमा और कहा कहौं मोहन-मन हरि-लैन ॥
अधरनि की छबि कह कहौं रसमय मधुर सुरंग।
सींचत पिय हिय लोइननि पानिप-बारि-तरंग ॥

अति सुन्दर बर चिबुक पर साँवल बिन्दु सलौन।
मनहु स्याम मन अलप ह्वै बैठ्यौ तहँ धरि मौन॥
कैसे के बरनौं सखी सहजहिं भाँति अनूप।
चलैं ढरकि मन-मैन ज्यौं लागत छबि रवि धूप॥
पानिप झलक कपोल पर छुटि रह्यौ अलक रसाल।
बेसरि कौ मुक्ता चपल चञ्चल नैन बिसाल॥११॥
विविधि भाँति भूषन बसन प्रतिबिम्बित अँग अंग।
रूपनि मनिगन में मनौं झलकनि उठत तरंग॥
झलकनि झमकनि कहु कहौं सोभा बढ़ी सुभाइ।
मानहु कोटिक दामिनी छबि सौं चमको आइ॥
मेहँदी परम सुरंग सौं रचे चरन मृदु पानि।
मनु रैनी अनुराग की रँगे कमल दल-पानि॥
नैनानि अञ्जनि देति सखि काँपति कर अरु हीय।
अति बिसाल चञ्चल चितै विवस होत है पीय॥
अति प्रवीन सब अंग में रूप सींव सुकुवाँरि।
बाढ़त है छबि अधिक तब लालहिं लेति सँभारि॥
प्रेम प्रिया की कहु कहौं राखैं छबि सौं छाइ।
पिय के सर्वसु लाड़िली रहे बिनु मोल बिकाइ॥

उरजनि छबि हारावली लालनि रहे निहारि ।
तृपित न कबहूँ भये हैं पिवत प्रेमरस-वारि ॥
नखसिख मोहनी सोहनी वारौ रति श्री कोटि ।
जद्दपि पिय मोहनहुँ ते रहे चरन तर लोटि ॥
सखियनि मण्डल में खरी तैंसिय झलक सिँगार ।
मनु सेवत छवि चन्द कौं रूप के कमल अपार ॥
अब सुनि प्यारे लाल की रुचि को रच्यौ सिँगार ।
बिसरि सारी कछुकी बेनी गुही सुढार ॥ २१ ॥
बेंदी दइ अति प्यार सों हँसि लाड़िलि सुकुवारि ।
बाढ़ी ऐसी फूल उर सकत न लाल सँभारि ॥ २२ ॥
कुन्दन के रतननि खचे बने तरौना कान ।
मानों छवि के कमल ढिग झलकत छवि के भान ॥
जहँ लगि भूषन कुँवरि के पहरे तेई बनाइ ।
कौन भाँति अति लाज सौं चितई मुरि मुसकाइ ॥
बेष प्रिया को करतहीं पानिप बढ़ो अनूप ।
मनु सब के मनहरन को प्रगटी मूरति रूप ॥ २५ ॥
नवल सखी छबि नई नई अंग अंग झलकन्त ।
मनों सुहाग अनुराग की सींव सुरँग श्रीमन्त. ॥

अति बिसाल चञ्चल दृगनि अञ्जन दियो बनाइ।
रेख सेख कोरनि बनी चित्तहिँ लेत चुराइ॥२८॥
नासा-बेसरि फबि रह्यो थिरकनि मुक्ता सङ्ग ।
मनहुं खिलावत बिधु बुधहिँ हित सों लिये उछङ्ग॥
बनी सहेली साँवरी सोभ रह्यो मनु छाइ ।
उपमा और कहा कहों लाड़िली रह्यो लुभाइ॥
चितवनि अति अनुराग की रँग-भीनी मुसकानि।
देखि छबीली छबिहि छबि पाइनि मैं परि आनि॥
मोहन तें बनि मोहनी लई सखी सब मोहि ।
अति सुठौन बानिक बनिक रही कुंवरि मुख जोहि॥
बीन कुंवरि की लयो कर बजई बाँकी तान ।
अति प्रवीन लीनो रिझै गाइ सुरनि बधान ॥
रीझि लाड़िली अङ्क भरि लीनो उर सों लाइ।
है सरिता छबि की मनों मिली आपु में आइ॥
बाढ़ी रुचि या बेष पर उपज्यो नूतन चाव ।
मिटी न मन की चपलता भूले और सुभाव॥३४॥
पियहिं प्रिया को बेष रुचै प्यारी को पिय बेष।
हिय तें हिय छूटै नहीं परि गई प्रेम की रेख॥

ठाढ़ी जुवति जूथ में छवि की उठत झकोर ।
मानहुं चन्दहिं घेरि रहे सब के नैन चकोर॥३६॥
करि सिँगार सहचरि सबै रूपहिँ रहीं निहारि।
बैठे कुञ्ज सिँगार में सेज सिँगार सँवारि ॥ ३७ ॥
राजत नवल निकुञ्ज में नवकिशोर चितचोर ।
सखी सहेली रस-भरी झमकि रही चहुंओर ॥
प्रेम मदन-रस को सदन रदन अधर धरि पीय।
रस-समुद्र में परे दोउ जुरे नैन अरु हीय ॥३८॥
लटकनि ललित सुहावनो सो तो बसि रह्यो हीय।
धव लावत उर प्यार सों हँसि हँसि प्यारी पीय ॥
कजरारे मुठि सो हने उज्जल स्याम सुरङ्ग ।
नैननि छबि पर वारि सत खञ्जन कञ्ज कुरङ्ग ॥
जिहिं२चितवनिचितहर्यौतिहिंचितवनिकोआस।
रसिकलाल छाड़त नहीं निमिष लाड़िली पास॥
कुंवरि चाल सखि देखि के कुंवरहिं भूलो चाल।
रहि गए ठाढ़े चित्र से चितवत नैन बिसाल ॥
जो फिरि चितवे लाड़िली ठाढ़े जमुनाकूल ।
फिरि आई अति प्यार सों लीने गहि भुज मूल ॥

अद्भुत जोरी रूपनिधि नवल लाड़िलो लाल ।
ऐसे रही ध्रुव हीय में जैसे काठ की माल॥४५॥
जोरी गोरी स्याम की सोभानिधि सुकुवार ।
अटके दोऊ आपु में उमड़ी प्रेम की धार॥४६॥
तिहिं धारा की बूंद इक कैसे परसो जाइ ।
और जतन कछु नाहिं ध्रुव रसिकनि संग उपाइ॥
मदन मोद मदरस मगन रहत मुदित मनमांहि ।
दरसत परसत उरज उर लपटतहूं न अघाहिं॥
कुंवरि कटाछनि की छटा मनु अनियारे बान ।
पिय हिय में ध्रुव लगत रहै सोई ह्वै गये प्रान॥
प्रीतम के जीवनि यहै नैन कटाछनि पात ।
त्यौं त्यौं पिय को सीस सखि चरननि तर ढुरिजात॥
ऐसे रस में परे मन जनम सुफल ध्रुव होइ ।
नैन-सैन मुसकानि रतन हिय गुन सौं लै पोइ॥
लाड़िलो लाल के प्रेम को जिनके रहै विचारि।
सुनि ध्रुव तिनको चरन-रज बन्दन करि सिर धारि॥

इति श्रीरङ्गहुलास सम्पूर्णम् ।

अथ मानरसलीला।

दोहा।

रची कुञ्ज मनि में मुकर झलकत परम रसाल।
राजत हैं दोउ रगमगे ह्वै गयो विचि इक ख्याल॥
देखि प्रिया प्रतिबिम्बछबि चकि तकि रही लुभाइ।
तिहिं छिन बैठी लाडिली मान कुञ्ज में जाइ॥
रहे सोच बिस्माइ तब तन की गति भई आन।
सिद स्वाँस दीरघ बचन कहत कहाँ प्रिय प्रान॥
कौन चूक मोते परी गई कहां दुख पाइ।
हे सखि मैं समझी नहीं इतनी सुधि लै आइ॥
बारबार सोचत यहै मैं तौ कह्यौ कछु नाहिं।
मन-देनी के समुझि तूं कह आई उर माहिं॥
कहा कहौं अब प्रान ये नैननि में रहे आइ।
जो गति देखे जाति है तैसी जाइ सुनाइ॥ ६॥

सोरठा।

को समुझै यह बात, कहा कहौं हिय चटपटी।
प्रान चले यह जात; रहि न सकत हैं प्रिया बिन॥

दोहा।

सुनत बचन पिय के सखी भरि आये दृग नीर।
रहिबे को व्याकुल भई चली प्रिया के तीर ॥८॥

आवत देखी जब सखी मुरि बैठी सुकुवारि ।
भौंह रुखाई मौन धरि नीची रही निहारि ॥९॥

मान-कुञ्ज अद्भुत बनी मानिनी मान अनूप ।
रस में कछु रिस नैन भरि बाढ्यौ सतगुरु रूप ॥

चतुरि सखी परि चरन मैं रुचि लै करति है बात।
देखैं पिय की गति प्रिये क्यौं दरक्यौ जात॥११॥

लुठति धरनि अँसुवा भरति बाढ़ी नदी अपार।
गहि रहे गुन इक नेह को राधा नाम अधार ॥

मुकट कहूं बंसी कहूं भूषन कहुं पटपीत ।
मैन-सैन लिये घेरि के तातै भये अति भीत॥१३॥

सेज कुञ्ज भूषन बसन अरु फूलनि को हार ।
देखि सबै अनखात है पावक जैसो झार ॥१४॥

चन्दन चन्द समीर बन कञ्ज मयूर समेत ।
सब दिन तौ यह सुखद है तुम बिन अब दुख देत॥

नेह रीति समुझति सबै तुम तें कौन प्रवीन ।
जल ते न्यारो होइ जो कैसे जीवै मीन ॥ १६ ॥

तुव मग जोवत छिनहिं छिन और न कछू सुहात ।
पच पवन खरकत जबहिं उठि धावत अकुलात ॥
जहँ लगि तुव मग लाड़िलो राखि नैन बिछाइ ।
ऐसे नेह नवल पिया लीजै कण्ठ लगाइ ॥ १८ ॥
राधा राधा रट लगी धरि राधा इक ध्यान ।
तदाकार तुव रूप भे अब जिनि करहु निदान ॥

अरिल ।

कहत हिये की बात सुनहु जो कान दै ।
बढ्यौ सरस अनुराग प्रान पिय दान दै ॥
एती समुझि कै बात विलम्ब न कीजियै ।
पुनि हँसि २ कै प्यारी लाल भुजनि भरि लीजियै ॥

दोहा ।

जब जान्यौ कछु मन भयौ चतुर-चित्त की पाइ ।
ल्यावन प्यारे लाल को तिहिं छिन आई धाइ ॥
सुनहु लाल नवबाल बलि बैठी अति हठ ठानि ।
मौन धरे नैना भरे दै कपोल पर पानि ॥
पाइनि परि हम दन्त धरि कीने जतन अनेक ।
लाल तिहारी लाड़िली छाड़त नहिं हठ टेक ॥

बहुत जतन बिनती करी बातें बहुत बनाइ ।
चलिये अब पिय प्रिया कौ लीजे बेगि मनाइ ॥
मन तौ कछु कोमल भयौ बातें लगी सुहान ।
मान छूटि है जातहीं यह पायौ उनमान ॥२५॥
आइ लाल ठाढ़े भये आगे दोउ कर जोरि ।
सुनिसुनि प्यारे वचन मृदु रही कुंवरि मुख मोरि॥
सुहृद अली अति हेत सों बाएँ करत निहोरि ।
रसिक लाल बलि प्रेम सों बँधे तिहारी डोरि ॥
कै तब स्याम-सनेह में समुझावति सखि तोहि।
अन्तर हित बाहिर सुरङ्ग हिय के नैननि जोहि ॥
जाके उर कछु प्रीति है कहत न अधिक बनाइ।
जैसे लहरि समुद्र की फिरि फिरि तहीं समाइ ॥
रतिलम्पट रस हेत हित अति अधीन ह्वै जाइ।
मधुर बचन सब कपट के कहत बनाइ बनाइ ॥
अब तौ कीनो नेम यह चलौं न तिनि की गैन।
कैसौ हँसिवौ बे[illegible]वौ सनमुख करौं न नैन॥३१॥

श्रीलालजी—दोहा।

तुम प्रवीन सब अंग में ऐसौ चित न विचारि।
तासों इतनौ चाहिये तन मन जौ रह्यौ हारि ॥

कैसे कै सहि जात है नेक रुखाई भौंह ।
यातें नाहिन और दुख प्यारी तेरी सौंह ॥
जो जानत अपराध कछु दीजै दण्ड विचारि ।
भुजनि बांधि रद अधर धरि नखछद करि सुकुमारि
तुम जीवनि भूषन प्रिये तुमही हौ निज प्रान ।
और करहु सब जो रुचै बीच न मानहु आन ॥

सोरठा ।

मेरी है गति एक, तव पदपङ्कज की प्रिये ।
अपने हठ की टेक, छाड़ि कृपा करि लाड़िली॥

दोहा ।

मोहन के मोहन बचन सुनि मोहनी मुसकाइ ।
प्यारी प्यारो प्यार सों ढरकि लियो उर लाइ ॥
जब देखि खेलत हँसत रस में दोउ सुकुमार ।
हित ध्रुव तिहि छन सखी सब करैं प्रान बलिहार॥

इति श्रीमानलीला सम्पूर्णम् ।

अथ रहसिलता लिख्यते ।

दोहा ।

जो रस श्रीहरिवंश कहि बिरलो समुझनहार ।
एक दोइ जो पाइये खोजों सब संसार ॥ १ ॥
नव किशोर सुकुमार तन मृदु भुज मेले अंश ।
जोरी सनी सनेह रस प्रगट करी हरिवंश ॥ २ ॥
नवदूलह नवदुलहिनी एक प्रान है देह ।
वृन्दावन बरषत रहैं नवल नेह को मेह ॥ ३ ॥
कहाकहों पानिप मुखनि छविहि नाहिं कहुंवोर ।
राजत ऐसी भांति मनु है ससि चतुर चकोर ॥
सीसफूल सिखिचन्द्रिका छवि कै उठत झकोर ।
मानों छत्र सिंगार ढिग निरतत मोरी मोर ॥
बिबि भालन बिबि बरन की बेंदी दई अनूप ।
मनु अनुराग सिंगार को जोरो बनो सरूप ॥५॥

सोरठा ।

लोचन परम रसाल, कजरारे सुठि सोहने ।
चञ्चल बङ्क बिसाल, अनियारे मनमोहने ॥ ६ ॥

चन्द्रायण ।

देखत आप में रूप न कबहुँ अघात हैं ।
दोऊ एक रस रीति प्रेम न समात हैं ॥
पल पल में रुचि बढ़ै सखी मुसकाति हैं ।
परिहां मुख सों मुख रहे जोरि तऊ ललचात हैं॥

दोहा ।

झलकनि बेसरि दुहुनि की उपमा कही न जाइ।
स्वास पवन मुकतनि डुलनि सो छवि रहि उर छाइ॥
कहा कहों छवि नासिकनि शुक-तिल फूलनि डारि।
अधर सुरंग बधूक में बिम्ब पवारिनिवारि ॥
चिबुकमध्य बनि सहजहीं बिंदुकन अतिहि अनूप।
पिय सांवर को मन मनो पर्यो प्रेम के कूप ॥
बङ्कचितवनी रसभरी बेधे प्रीतम-प्रान ।
यद्यपि सूर प्रवीन हैं भूले सबै सयान ॥ ११ ॥
रूप घटी छवि की छटा उमड़ी रहत अनेक ।
कैसे सकै सँभारि सखि पिय चित चातिक एक॥
छुटे बार सोंधे सुने श्रमजलकन मुख जोति ।
मनु सींवा सिंगार की बनी कण्ठ परि पोति ॥

जलजहार हीरावली रतनावली सुरंग ।
मनु अनुराग सरोवरै उठत है रूप तरंग ॥१७॥
पानिप झलक कपोल पर अलक रही सुठि सोहि।
रसिकलाल पाइनि परत छिन २ यह छवि जोहि॥
कहि न सकत अंगनि प्रभा मेरी मति अतिहीन ।
चन्द्र सी:मन्तक दामिनी जम्बूनद रद कौन ॥१६॥
मोतिन कीं लर बीचि बिच कण्ठ गुराई रेख ।
निरखि पर्यो मनमोह फँद बिसर्यो मोहन वेष॥
कुच-कमलन की छवि निरखि रहे लाल ललचाइ।
अतिविसालअँखियनि निरखि चितई मुरिमुसकाइ॥
अतिसुदेस अँगिया बनी कसनि कसी छवि देत।
भुजमूलन की गौरता पिय-प्राननि हरि लेत ॥
सोभा की सरिता उदर नाभि भँवर रस ऐन ।
परे तहां निकसत नहीं प्रीतम के मन नैन ॥२०॥
वसन सुहाने अति सुरँग चुनि पहिराये बानि ।
मेंहदी परम सुरंग सों रचे चरन मृदु पानि ॥
प्रेमवेलि दुहु में बढ़ी फूली फूल बिलास ।
निसिदिन पहिरे रहत उर दम्पति हार हुलास॥

पिय-नैननि में प्रिया बसै प्रिया-नैन में पीय ।
हिय सों हिय लागे रहैं मिलि रहि जिय सों जीय॥
दरसत परसत हँसतही बीते कलप अनेक ।
कबहुं न पिय आई हियें मिलि बैठौ घरि एक॥
अति उदार सुकुमार दोउ रसिक सूर रस माहिँ ।
छिनछिन बाढ़त चौंपनै नेक मुरत मन नाहिँ ॥
रसिक रँगीले रँगभरे अतिही रस लै आहि ।
अद्भुत छबि की माधुरी जीवत हैं दोउ चाहि ॥
बदन किशोरी चन्द्र मनु भये किशोर चकोर ।
पल न परत निरखत नवल नैननि-कोरनि ओर॥
बङ्क भृकुटि अति सोहनी विचबिच मुसकनिमन्द।
कैसे निकसै पर्यो मन रचे जहां इत फन्द ॥
देखि दसा पिय लाल की रही बाम तन घूमि ।
कोमल हिय अति हेत सो लागी पियहिय झूमि॥

सोरठा ।

अद्भुत प्रेमविहार, रह्यो प्यार भुव छाइ कै ।
तैसइ दोउ सुकुमार, और सखिन गति एकही॥

दोहा।

पिय को मन प्यारी प्रिया प्यारी को मन लाल।
पहिरे पट तहँ तन वरन चलत एकही चाल ॥

सील सुभाव सनेह गुन वय अरु रूप समान ।
रँगे परस्पर एक रँग अति प्रवीन रसजान ॥

छिनछिन बाढ़त नेह नव पल पल रूप तरंग ।
इक रस प्रेम छके रहैं भीने रंग अनंग ॥ ३३ ॥

मोहि मोहन मैनरस चितवति भौंहनि भाइ ।
कबहुँ विवस चेतत कबहुँ प्यारी प्यार उपाइ॥

खेलत रहसि निकुञ्ज में अतिही रहसि जु केलि।
लपटी प्रेम तमाल सों मनों रूप की वेलि ॥

नूपुर भूषन मनि झलक किङ्किनि सब्द अपार।
सखियनि हियो सिरात सुनि झनक२ झनकार॥

कबहुं बात मुसकात विच फिरिफिरि फिरि लपटात
ऐसे रंग विहार में तदपि न सखी अघात ॥३७॥

रीति दुहुन की एकही हारति नाहिन कोइ ।
जो छिन आवत है सखी चौंप चौगुनी होइ ॥

लागे आनँदवेलि सों चितवनि मुसकनि फूल ।
लाज वसन तजि कै मनो पहिरे फूल दुकूल ॥

नैन कटाक्षनि की छटा चितै रहै मुरझाइ ।
तबहिँ कुंवरि दै अधररस लीने उर सों लाइ ॥
पिय की औषधि है यहै अधरसुधारस पान ।
एक लाड़िली सहजही जिनकी जीवनि-प्रान ॥
अङ्गनि की छवि चितइबो यह जीवनि पिय जीय ।
और भजनि भरि हित सों रहत लाइ जब हीय ॥
रसपति रतिपति भूलि रहि देखत अद्भुत रीति।
घटत न कबहुं बढ़त रहै छिनछिन नवनव प्रीति॥
हँसि चितवत जब लाड़िली डगमगात सुकुमार।
अति·प्रवीन रसनागरी थाभिँ लेत तिहि बार ॥
विवस होत जब दोउ प्रिय माते प्रेम अनंग ।
रहत सहेली सहचरी सावधान तिहि संग ॥४५॥
अधर अधर हिय सों हियो उरजनि सों पियपानि
अंगनि आवत चेत भय समझत सखी सुजान ॥
कबहुं प्रिया पट पीय के पिय प्यारी के बास ।
पहिरे दोउ आनन्द में निरतत रासविलास ॥
हावभाव निरतत मनों चितवनि सुलप सुदेस ।
उरप तिरप झटकनि भुजनि खुले सगबगे केस ॥

अधरन की जुरी मण्डली करनि फिरनि सुखमूल।
नैन सैन दैबो सरस मुसकनि बरषत फूल ॥४९॥
राग बचन धुनि भूषननि बाजे बजै अनंग ।
सखी मृगी रहि मोहि कै जिनके प्रेम अभंग ॥
निसिदिन है अवलम्ब यह अद्भुत जुगलविहार।
ललितादिकनिजसहचरी छिनछिनकरतिसिंगार॥
यह रस तौ कछु सुगम नहिँ तन मन ते अतिदूरि।
जानत तेई रसिकजन जिनकी जीवनि मूरि ॥
ब्रह्मादिक मुकटनिसहित जिनकों घसत है सीस।
प्रियाचरन जावक रचत तेइ बृन्दावन-ईस ॥
यह विलास जो चिन्तवत चिन्ता सब मिटि जाइ।
आनँद को दीपक दिपै निसदिन तिह उर माहि॥
यह रस परस्यौ नाहिँ जिन तिनहि न नेक जनाइ।
जैसे धन को धनी ध्रुव राखत दूरि दुराइ ॥५५॥
सहज अलौकिक प्रेमवर दम्पति रहे लुभाइ ।
लौकिक रसना के कहौ कैसे वरन्यो जाइ॥५६॥
बृन्दावनवर कलपतरु सर्वोपरि ध्रुव आहि ।
मनहूँ कै जो चिन्तवत देत तबहिँ फल ताहि ॥

दोहा रहसिलतानि के अष्ट उपर पञ्चास ।
सुनत सुनावत बढ़ै उर हित ध्रुव प्रेमविलास ॥

कुण्डलिया ।

बार बार तो बनत नहिँ यह संयोग अनूप ।
मानुषतन बृन्दाविपिन रसिकनि संग विरूप ॥
रसिकनि संग विरूप भजन सर्वोपरि आही ।
मन दै ध्रुव यह रंग लेहु पल पल अवगाही ॥
जो छिन जात सो फिरत नहिँ करहु उपाइ अपार
सकल सयानप छाड़ि भजि दुर्लभ है यह बार ॥

इति श्री रहसिलता सम्पूर्णम् ।

अथ प्रेमलता लिख्यते ।

चौपाई ।

प्रथमहि शुभ गुरुपद उर आनौं । बात प्रेम की कछुक बखानौं ॥ और कृपा रसिकनि कौ चाहौं । तब या रस के सर अवगाहौं ॥ लाल लाड़िलो जो उर आनो । तैसो मोपै जाति बखानो ॥ घटि बढ़ि अच्छर जो कहुं होई । लेहु बनाइ कृपा करि सोई ॥ रसिक रसिकनी को जस जानौं । और कछू जिय जिनि उर आनौं ॥ कहौ प्रेम की गति ध्रुव यातैं । सुनतहिँ सरस होत जिय जातैं ॥ अरु रसरीति पन्थ पहिचाने । तब या रस के स्वादहि जाने ॥ ७ ॥

दोहा ।

जिन नहिँ समझ्यौ प्रेम यह तिनसौं कौन अलाप।
दादुरहूं जल में रहै जानै मीन मिलाप ॥ ६ ॥

चौपई ।

खान पान सुख चाहत अपने । तिनकौं प्रेम छुवत नहिँ सपने ॥ जो या प्रेम हिंडोरै झूलै ।

तिनकों और सबै सुख भूलै॥ प्रेमरसासव चाख्यौ जबहीं। औरै रंग चढ़ै धुव तबहीं॥ या रस में जब मन परै आई। मीन नीर की गति ह्वै जाई॥ निसिदिन ताहि न कछू सुहाई। प्रीतम के रस रहै समाई॥ जाकौ है जासों मन मान्यौ। सो है ताके हाथ बिकान्यौ॥ अरु ताके अँग सँग की बातें। प्यारी सब लागत तिहि नातें॥ रुचै सोई जो ताकों भावै। ऐसी नेह की रीति कहावै॥ जो रस लाल लड़ैती माहीं। ऐसो प्रेम और कहुं नाहीं॥ १०॥

दोहा।

ब्रजदेवी के प्रेम की बँधी ध्वजा अति दूरि।
ब्रह्मादिक बांछत रहैं तिनके पद की धूरि॥

चौपाई।

तिनहूं कौ मन तहां न परसै। ललितादिक तिहि ठां छवि दरसै॥ नित्य विहार अखण्डित धारा। एक वैस रस मधुर विहारा॥ नित्य कि-शोर रूप निधि सींवा। बिलसत सहज मेलि भुज ग्रींवा॥ तिन विच अन्तर पलकौं नाहीं।

तउ निरखित प्रीतम मन माहीं॥ अद्भुत सहज रंग सुखदाई। तहां प्रेम की एक दुहाई॥ पिय गजमत्तन अंकुस के बस। परम सुछन्द फिरत अपने रस॥ देखतहीं तिनकी परछाहीं। मदन कोटि व्याकुल ह्वै जाहीं॥ ते मोहन-बस कीने गोरी। राखि बाँधि प्रेम की डोरी॥ छुटत न क्योंहूं ऐसे अटके। प्रान हारि चरनन तर लटके॥ प्रीति की रीति लालही जानें। तजि प्रभुता बिन मोल बिकानें॥ तैसइ रसिक प्रवीन किशोरी। रसनिधि नेह के सिन्धु झकोरी॥ पिय को राखति नैननि आगे। हुलसि हुलसि प्रीतम उर लागे॥ अवधि प्रम की सहजहि प्यारे। बरबस प्रेम दुहुन मन मारे॥ एक रंग रुचि रहि सब काला। उज्जल प्रेम लाड़िली लाला॥ ३२॥

दोहा।

तन मन रूप सुभाव मिलि ह्वै रहै एकै प्रान।
जीवनि मुसकनि चितइवो अधररसासव पान॥

चौपाई।

वृन्दावनघन राजत कुंजैं। विहरत तहां रसिक

सुखपुंजैं ॥ एक प्रान विवि देह हैं दोऊ। तिन समान प्रेमी नहिँ कोऊ ॥ सब पर अधिक जानि यह प्रेमा। ताके वस भे तजि सब नेमा ॥ या सुख पर नाहिन कोई। जातें सो जो भेदी होई॥

दोहा।

अद्भुत नित्त अभूत रस लाल लाड़िली प्रेम ।
छिन छिन नख मनि चन्द्रकनि सेवत हैं सुख नेम॥

चौपाई।

प्रेममई रस में न विनोदा। नव नव उपजत हैं दोउ कोदा ॥ तिहि विहार-रस मगन विहारी । जानत नहिँ कित द्यौस निसा री ॥ जो कोउ कोटिक भांति बखानें । बिन स्वादी या रस नहिं जानें ॥ रहत हैं दिनहि प्रेम सरसाई। तहां मान की नाबि समाई ॥ सूक्षम प्रेम न मनमें आवै। स्थूल रूप सबही को भावै ॥ महा मधुर रस सब तें न्यारौ। जिहि ठां दुहन अपन पौ हार्‌यौ ॥ तिनहि देखि आसक्तिहु भूली। ह्वै आसक्ति सुख रस में भूली ॥ ४५ ॥

दोहा ।

लाल लाड़िली प्रेम तें सरस सखिन को प्रेम ।
अटको है निज-प्रीतिरस परसत तिनहि न नेम॥

चौपई ।

सखियन के सुख पर सुख नाहीं। आनँदमोद रँगी मनमाहीं ॥ रूपरसासव यहै अहारा । तन मन की कछु नाहिँ सँभारा ॥ एकहि रस नित भींजी रहहीं । साँझ भोर समझ्यो नहिँ कबहीं॥ सो रस करत रहत हैं पानें । निसिबासर बीतत नहिँ जानें ॥ या रस सों जाको मन मान्यौ । सोइ ध्रुव रसिकनि प्रान समान्यौ ॥ ५१ ॥

दोहा ।

छिन छिन नवलविहार में करत हैं नवल-सिँगार।
रुचि तरंग पल पल तहां बाढ़त रहत अपार ॥

चौपाई ।

करि सिँगार जब दोऊ निबरे । छवि सों नव निकुंज तें निकरे ॥ भयो प्रकास नखमनि दुति ऐसो । कोटि चन्द्र आभा नहिँ तैसो ॥ तिनिके रूप न बरनें जाहीं । मोहत मैन देखि परछाहीं॥

हित कौं सीव सहेली साहैं । चहुँ दिसि मनों च-
कारी जाहैं ॥ अंगनि की निज सौरभताई ।
जहँ तहँ पूरि रही बन माहीं ॥ सो सुवास जो
नेंकहि पावै । प्रेम विवस तनसुधि विसरावै ॥
परे प्रेम के फन्द झँझारो । सर्वसु प्रान रहे तहँ
हारो ॥ तिहिं बिन ताहि न और सुहाई । बिन
देखे हीयो अकुलाई ॥ सुनत श्रवन भूषन झन-
कारा । षग मृग चकित थकित जलधारा ॥ मे-
हँदी रँग पद अम्बुज बने । धरत अवनि पर छबि
को गने ॥ लटकि लटकि अलबेली भांति । ल-
पटि लाल उर मृदु मुसुकाति ॥ ऐसी छवि ध्रुव
नैननि मांझ । रही निरन्तर भोर&साँझ ॥ प्रेम-
वेलि वृन्दावन फूली । पिय तमाल अंसनि पर
झूली ॥ देखि महाकवि सुधि बुधि भूला । सब
सखियनि की जीवनिमूला ॥ तिनि सखियनि
की कृपा मनाऊँ । या रस की कनिका जौं पाऊँ ॥

दोहा ।

निसिदिन तौ जाँचत रहौं वृन्दावन रस ऐन ।
छिन छिन दम्पति छवि छटा छाइ रहौ ध्रुव नैन ॥

इति श्रीप्रेमलतासम्पूर्णम् ।

अथ प्रेमावली लिख्यते ।

दोहा ।

प्रगट प्रेम को रूप धरि श्रीहरिवंश उदार ।
राधावल्लभ लाल को प्रगट कियौ रस सार ॥
हरिवंस चन्द सब रसिकजन राखे रस में बोरि ।
प्रेम-सिन्धु विस्तार कै नेम मेड़ दई तोरि ॥ २ ॥
रूपबेलि प्यारी बनी प्रीतम-प्रेम तमाल ।
द्वै मन मिलि एक भये राधावल्लभ लाल ॥ ३ ॥
लपटि रहे दोउ लाड़िले अलबेली लपटानि ।
रूपबेलि बिबि अरुझि परि प्रेम सेज पर आनि ॥
प्रेम रीति निज आहि जो तामे लाल प्रवीन ।
अंग अंग सब हारि कै रहे आप ह्वै दीन ॥ ५ ॥
अलबेली नागर जहाँ धरत चरन छबिपुञ्ज ।
पलकनि को करि सोहनो देत कुंवर तिहि कुञ्ज ॥
धरति भावती पग जहाँ रहत देखि तिहि ठौर ।
को समुझै यह सुख सखी बिना रसिक सिरमौर ॥
भरि आये दोउ नैन जहँ रहे नेह बस भूमि ।
तिहिं तिहिं ठां काहे भई इन प्राननि की भूमि ॥

देखि प्रेम पिय को सखी नैन भरे जल आइ ।
समझि दसा उनकी तबहिं पुतरिनि लयौ समाइ ॥
लिये दीनता एकरस महा-प्रेम रँग रात ।
ऐसी प्यारी पीय कों देखतहूं न अघात ॥ १० ॥
जावक रँग भीने चरन गोर बरन छवि सींव ।
निरखत पिय अनुराग सों ढरी जाति अध ग्रीव ॥
अङ्ग अङ्ग सब लाल के झुकति प्रिया की ओर ।
सहज प्रेम को ढार पर्यो बँधे नैन की कोर ॥
जिनको है यह प्रेमरस सोई जानत रीति ।
ज्यों हारे तें पाइये नेह खेत में जीति ॥ १३ ॥
मन के पाछे मन फिरै नैननि पीछे नैन ।
यहै एक सुखलाल को पूरि रह्यौ उर ऐन॥ १४॥
नैननि छावत फिरत पिय पत्र फूल बन जैत ।
प्रान-प्रिया दृग छटा जल सींचे सखि यह हेत ॥
नैननि बाढ़ी तृषा अति ज्यों ज्यों देखत रूप ।
पानिहिं लागै प्यास जो कहा करै ढिग कूप ॥
बिटप डारि अवलम्बि पिय ठाढ़े चितहिं न चैन।
झलझलात भरि प्रेम-जल झलकत सुन्दर नैन ॥

और सबै सुख देह के पिय मन तें गये भूलि ।
अवलोकत मुख माधुरी रहे प्रेम-रस झूलि ॥१८॥
हेरि हेरि हिय गहबरे भरि भरि आवै नैन ।
कौन अटपटी मन परी मुख पैं कहत बनै न ॥
चितवनि सों चितरँगि रह्यो मुसकनि रसबस मैन ।
अँग अँग दीप अनङ्ग मनु परत पतङ्ग जु नैन ॥
अद्भुत अंगनि की झलक उठत तरंग सुभाइ ।
समुझि दसा पिय की प्रिया रहति छिपाइ छिपाइ ॥
प्रीतम प्यासे प्रेम के सो रस कह्यो न जाइ ।
नैन रूप ह्वै जाइ जो प्यास न तऊ सिराइ ॥२२॥
अद्भुत रूप विलास सुख चितवत भूले अंग ।
सहज सिन्धु सुख में परे नखसिख प्रेम अभंग ॥
नयौ नेह नेही नये नयौ रूप सुखरासि ।
नयौ चाव बिलसैं सहज परे प्रेम की पासि ॥२४॥
यदपि रहत इक संग मिलि मन चंचल अति लाल ।
सहज प्रेम के सिन्धु में दोऊ करत कलोल ॥
रचि रचि बीरी देत पिय महा-प्रेम की रासि ।
सर्वस है जिनके यहै चितवनि कै मृदुहासि ॥

पीकदान लीने कुंवर चितवत मुख की ओर ।
रहै उगार की आस धरि ज्यौं प्रति चन्द चकोर ॥
मनवच कायिक एकरस धरे महाव्रत प्रेम ।
प्रानपियहिं सेवत कुंवर याही सुख को नेम ॥
प्यारी सर्बसु लाल के लाल प्रिया के प्रान ।
सहज प्रेम दुहुं में बढ्यौ फीके भे रस आन ॥
मन्द मन्द मुसकाति जब बेसरि तरल तरङ्ग ।
चिते चितवत रहे पिय सिथिल भए सब अङ्ग ॥
मुकर पानि लिये लाड़िली बैठी सहज सुभाइ ।
अनियारी अँखियनि कियौ अञ्जन रुचिर बनाइ ॥
सोच रही तिहिं छिन कछू इत उत चितवत नाहिं ।
प्रीतम मन की मृदुलता गड़ी आइ मनमाहिं ॥
प्रेम रूप को सुख सहज सो ध्रुव कहत बनै न ।
के जाने मन तिहिं बिध्यो के समुझे दोउ नैन ॥
नित्य सहज दूलहू कुंवर दुलहिनि अति सुकुवारि ।
नयौ चाव नितही रहै अद्भुत रूप निहारि ॥
नवकिशोर धन्नत सदा आनन्द की दोउ गोभ ।
नई अटक की चौंपढ़िन परे प्रेम के लोभ ॥३१॥

और भोग नहिं प्रेम सम सब को प्रेम सिंगार।
तिहिं अवलम्बैं रसिक दोउ सकल रसनि को सार॥
प्रेम-मदन मद किये रद और सकल सुख जीत।
कुंवरि सुभाइनि रँगरँग्यौ छिन छिन होत अचेत॥
लाल नैन भए लाल के रंग रँगीलो लाल।
अन्तर भरि निकस्यौ चहत इहि मग मनु अनुराग॥
लै सुघर जावक सुकर चरननि चित्र बनाइ।
मृदु अँगुरिनि की छबि निरखि पुतरिनि सों रहिलाइ॥
दसन खण्डि अति रीझि कै पिय मुख बीरी दीन।
सींवा दोउ अनुराग की भए एक रस लीन॥
पट भूषन जे कुंवरि के प्रीतम के ते प्रान।
अति अनन्य रस प्रेम में परमत नहिं कछु आन॥
ते पटभूषन पहिरि पिय सहचरि जो वपु बानि।
फिरत लिये अनुराग सों कुसम बीजना पानि॥
प्रेम कुंवर को समुझि कै प्रेम-वारि भरि नैन।
रही लपटि पिय के हिये सो सुख कहत बनै न॥
अमित कोटि जुग कल्प लौं राखि उर नि माहिं।
ते सब लवरस रैनि सम बीतत जानै नाहिं॥४४॥

प्रिया-प्रेम आसव महा-मादिक रहै दिन रैन ।
कैसे छूटत विवसता भरि भरि पीवत नैन ॥४५॥
महामोहनौ मन हर्यौ तन डोलत तिन सङ्ग ।
बोलत नहिं चितवत मनै बस्यौ जाइ किहि ढङ्ग॥
विन देखे रैवत न कछु छवि छायौ उर ऐन ।
कुंवरि राधिका लाड़िली पिय नैननि के नैन ॥
जहँलगिसुखकहियतसकलसुनिध्रुवकहतबिचारि।
सहज प्रेम के निमिष पर ते सब डारे वारि ॥
यह सुख समझन को कछू नाहिन आन उपाइ।
प्रेम दरीचौ जो कहूं सहज कृपा खुलि जाइ ॥
एकै प्रेमी एकरस राधावल्लभ आहि ।
भूलि कहै कोउ और ठां झूठौ जानौं ताहि ॥
तीनलोक चौदह-भुवन प्रेम कहूं ध्रुव नाहिं ।
जगमगि रह्यौ जराव सौं श्रीवृन्दावन माहिँ ॥
प्रेमी बिछुरत नहिं कहूं मिल्यौ न सौं पुनि आहिं।
कौन एकरस प्रेम कौं कहिन सकत ध्रुव ताहिं॥
ढूंढ़ि फिरे त्रैलोक जौं बस्तु कहूं ध्रुव नाहिं ।
प्रेम रूप सोउ एकरस बसत निकुञ्जनि माहिं॥

नित्य भूमि-मण्डल सहज श्रीबृन्दावन ऐन ।
रतनजटित जगमगि रह्यौ रसिकनि मन सुखदैन॥
तरनिसुता चहुँदिसि बहै सोभा लिये अथाह ।
मनो ढरयौ सिंङ्गाररस मण्डल बाँधि प्रबाह ॥
आवत उपमा और उर अद्भुत परम रसाल ।
बृन्दाबन पहिरी मनो नीलमनिन की माल ॥
हेम बरन अद्भुत धरनि मनिन खचित बहुरंग।
बिचि बिचि हीरनि की झलक मानो उठत तरंग॥
मृगी मयूरी हंससिनि भरी प्रेम आनन्द ।
मत्त मुदित पीवत रहैं जुगल कमल मकरन्द ॥
कुञ्ज कुञ्ज प्रति झलमलैं आसन सेज सुदेस ।
सहजसौंज छिनछिन नई कहि न सकत कबिलेस॥
नेकु होत ठाढ़ी कुंवरि जिहिं फुलवारी माहिं ।
पत्र फूल तहँ के सबै पीत बरन ह्वै जाहिं ॥६०॥
प्रेमरूप के मोद की सुन्दर देह रसाल ।
सोइ लड़ैती लालजी कीनी है उर माल ॥६१॥
रोम रोम प्रति लाड़िली रस रूप की खानि।
प्रीतम की जीवनि यहै सरस मन्द मुसकानि ॥

अति सुलज्ज अनुरागयुत अनियारे छबि ऐन ।
अरुन असित सित साहने काजर भीने नेन ॥
श्रवनाइत बाँके चपल घूँघट पट न समात ।
अवलोकत जिहिं ओर को छबिबरषा ह्वै जात॥
हावभाव लावण्यता कही सकल जे कोक।
निसिदिन कर जोरे तहाँ सेवत नैननि नोक ॥
अति सुदेस रह्यो झलकि कै बेंदा सुरँग रसाल।
मनो सुहागऽनुराग को प्रगट बिराजत भाल ॥
नखसिख भूषन कबि रहे कहि न सकत कछु रूप।
सीस फूल सिङ्गार को मानौं छत्र अनूप ॥६७॥
झलकिकपोलनिकाँकहौंमुखपानिपबहुभाँति ।
अँखिया रपटत चितै तहँ डीठि नहीं ठहरात॥
नासा बेसरि छबि रही सोभा को मिति नाहिं।
मनो मीन तहँ थरहर पर्‍यो रूप जल माहिं ॥
बरकपोलपरअमिततिलअलकरहीतहँजाइ ।
प्रगट लाल को मन मनों पर्‍यो फन्द बिच आइ॥
नैन अधर कुच कर चरन झलकत अद्भुत रंग।
कनक बेलि मनु फूल रही नखसिख कमल सुरंग॥

प्रिया-बदन बर कञ्ज पर भ्रमत भृङ्ग पिय-नैन ।
छबि परागरस-माधुरी पीवतहूं नहिं चैन ॥७२॥
ठौर ठौर पिय रचत है आसन सुमन रसाल ।
को जानै कहँ बैठि है अलबेली नव बाल ॥७३॥
समुझि हेतु पिय कौं तबहिं बैठी तहँ मुसिकाइ।
पिय ग्रीवाँ भुज मेलिकैं अँग अँग रहि लपटाइ॥
रची सेज मृदु दलनि लै अरुन पीत अरु सेत ।
तापर राजै लाड़िली इतनो मन कौ हेत ॥७५॥
रंग रंग के सुमन पिय लै रचि माल बनाइ ।
तन मन कौ सुख को कहै जब द[illegible]त पहिराइ॥
रूप माधुरी की झलक निरखि रीझि सुख पाइ ।
चहुंदिसि फिरि आवत कुंवर पगनि सीस रहे लाइ॥
रूपसिंधु में मन पर्यौ ढरत नैन दुहु नीर ।
डगमगात सखियनि गहे देखि लाल अधीर॥७८॥
लये अङ्क भरि लाड़िली बिबस लाल को जानि।
कही परत सखि कौन पै बिचि मन की अरुझानि॥
प्रेम प्रेम मन मन समझि नैन सजल झलकाति।
मुख निसरत नहिं बैन कछु बिबसत दोउ ह्वै जात॥

पिय-प्यारी दोउ रँग भरे ढरे सेज पर आनि ।
बिबस सखी चितवत खरी महाप्रेम लपटानि ॥
परे प्रेम सुख रंग में दोऊ नवलकिशोर ।
इतनी नहिं जानत सखो निसा होत कब भोर॥
पोक कहूं अञ्जन कहूं मुकतावलि रहि टूटि ।
सिथिल बसन भूषन कहूं अलक रही कहुं छूटि ॥
श्रम जल-कन छबि बदन पर चितवत प्रीतम ताहिं।
पानिप कौं पानी मनौं प्रगट देखियत आहिं ॥
अञ्जन तिल रह्यौ अधर पर नैननि पर लगि पोक।
इत हद करी सिंगार की उत दृढ़ प्रेम की लीक॥
एक प्रेम बिबि मन हरे अरुझी मृदु भुज ग्रीव ।
उभै सिंधु मिलि उमड़ि चले रहत तहँा क्यों सींव॥
पीवत मुख छबि माधुरी व्याकुल रहैं तऊ नैन ।
रोम रोम बाढ़हि तृषा जहाँ प्रेम को नेम॥८६॥
रस-रंगी रस-रँग में भीजे सहज सनेह ।
परत प्रेम आनन्द में दुहुंनि भूलि गइ देह॥८७॥
भए अचेत पुनि चेत कै उठे कुंवर सुकुवार ।
नैना प्यासे रूप के पिवत डीठि भई बार ॥८८॥

कहि न सकों तिनकी दसा छिनछिन नौतन नेह।
एक प्रान ह्वै तहँ रहै देखन कौ है देह ॥८६॥
एक स्वाद ध्रुव एकरस प्रेम अखण्डित धार ।
इक छत प्रेम दशा रहै सकल सुखनि कों सार॥
प्रेम तरंगनि में परे छिन छिन प्रति यह केलि।
महामत्त घूमत फिरै दोऊ कण्ठ भुज मेलि ॥
बिलसत नित्य बिहार दोउ प्रेम खेल तिहिं ठौर।
और कछू परसत नहीं महारसिक सिरमौर॥६२॥
प्रेमपगीं तैसो सखी रँगी दुहुंनि के हेत ।
सहज माधुरी रूप को नैननि भरि भरि लेत ॥
अद्भुत प्रेम सखीनि के विमल अखण्डित धार।
रसिक कुंवर दोउ लाड़िले करि राखि उर हार ॥
सहज प्रेम की सींव दोउ नवकिशोर बरजोर ।
प्रेम को प्रेम सखीनि के तिहिं सुख को नहिं ओर॥
हारि हारि जीतत दोऊ जीति जीति रहै हारि।
महाप्रेम देखत सखी जहँ तहँ रही विचारि ॥
नेकु भौंह की मुरनि में लाल दीन है जात ।
जल सूखे जलजात ज्यों बदन मृदुल कुमिलात॥

भयौ हियौ अनुराग सों रहि न सकी अकुलाइ।
लयै लाइ पिय हीय सौं अधर सुधारस प्याइ ॥
मान मनावन छुटि गयौ पयौ उपटि तहँ प्रेम।
अन्तर भरि बाहरि भयौ रहे लीन ह्वै नेम ॥९९॥
सहज रूप कौ कञ्ज-मुख तामें मुख-कनि मन्द।
जीवनि पिय हृग अलिन के सोई तहँ मकरन्द ॥
अलबेली हँसि के जबहिं पिय सौं कहि कछु बात।
धनिधनिकेमँागतसखीतिहिंछिनकोबलिजात ॥
रह्यौ झलकि वृन्दा विपिन कुंवरि रूप के तेज।
रहे कुंवर छकि के तहाँ धरि न सकत पत सेज ॥
लीने कर गहि लाड़िली लै बैठी बर अङ्क।
बदन बदन पै जुरि रहे मनु मिले कञ्जमयङ्क ॥
परम रसिक आसक्त दोउ भूली तिनिहिं निहारि।
अँग अँग मिलि अरुझे रहे सकत नहीं निरवारि ॥
प्रेम-मदन कौ सुख जहाँ सहज प्रेम सिङ्गार।
आदि मध्य अवसान इक इक रस बिमल बिहार॥
वृन्दाबन सरवर भयौ प्रेम नीर गंभीर।
तामें मज्जत रसिक दोउ बिसरे नैननि चीर ॥

सहज सघन छवि हरन मन श्रीबृन्दावन बाग ।
रह्यौ भूमि फलि कै तहाँ रस-मैं फल अनुराग ॥
प्रिया बदन तहँा झलमलै सहज रूप कौ चन्द ।
बिमल प्रकाश अखगड भर्यौ सुधा प्रेम मकरन्द ॥
श्रवत सोइ मकरन्द दिन प्रीतम नैन चकोर ।
प्रेम अमीरस माधुरी पान करत निसि भोर ॥
सघननिकुञ्जनिखोरिप्रति सुखकौ सहजनिवास ।
रह्यो भूमि जहँ फूलि कै लता सुरङ्ग सुबास ॥११०॥
परत दृष्टि जिहि सुमन पर पियप्रवीन यह जानि ।
धाइ कुँवर सोइ फूल लै देत कुँवरि को आनि ॥
बिहरत दोउ अनुराग में नवला सो लिये पानि ।
न्यारे तन देखत सखो छुटत न मन लपटानि ॥
घटत न मन की चाह अब हारत नहिं दृग चाहि
तृषत तऊ पिय लाड़िलो कौन प्रेम रस आहि ॥
प्रेमफूल प्यारी प्रिया सुरँग सरूप सुवास ।
इक जीवनि आसक्ति पुनि मधुपलाल रहै पास ॥
अति सुकुवारी लाड़िलो धरत चरन तिहि ठौर ।
नैन कमल के दल तहां रचत रसिक सिरमौर ॥

प्रेम अम्बुसर बिपिन बर अति अगाधि मतिनांहि।
कमलक मलिनी रसिक दोउ रहे फूलि तिहिँ माहिँ॥
भ्रमत सखी भ्रमरी तहां पीवत रूप पराग ।
पल पल प्रति बाढ़त रहै मादक नव अनुराग ॥
प्रेम खेल बृन्दाविपिन सुभटनागरी स्याम ।
हाव भाव आयुध लिये करत सुखद संग्राम ॥

कुण्डलिया ।

पियनैननि कौ मोद सखि पियनैननि कौ मोद।
रैन दिवस वीतत जिन्हैं सहजहि प्रेम विनोद ॥
सहजहि प्रेम विनोद रूप देखत दोउ प्यारे ।
लोइन मानत जीति दुहनि जद्यपि मन हारे ॥
परे नवल नवकेलि सुरस हुलसत हिय सैननि ।
छिन २ प्रति रुचि होइ अधिक सुन्दरपियनैननि॥

दोहा ।

नित्य नवल बृन्दाविपिन नित्य नवल घर हेम ।
नित्य नवल दोउ लाडिले नित्य नवल तहँ प्रेम॥
बृन्दाविपिन बिसाल पर प्रेम को खेल अपार ।
निवरत नहिँ छिन २ बढ़ै तैसेइ खेलनहार॥१२१॥

बिन रसिकनि बृन्दाबिपिन कौ है सकत निहारि ।
ब्रह्मकोटि ऐश्वर्य्य औ वैभव कौ तहँ हारि ॥१२२॥
राधावल्लभ प्रेम की प्रेमावलि गुहि लीन ।
हित ध्रुव जेतिक बुद्धि ही तासौं रचि २ कीन ॥
घटि वढ़ि अक्षर होइ जो तहां दृष्टि जिनि देहु ।
राधावल्लभ माल जस यहै जानि उर लेहु ॥१२४॥
प्रेमसार ध्रुव कछु कह्यौ अपनी मति अनुमान ।
अति अगाध सुख सिन्धुरस ताकौ नाहिँ प्रमान ॥
मन बच जो उर धारिहै प्रेमावलि कौं नित्त ।
प्रेम छटा ध्रुव सहजहीं उपजैगी तिहि चित्त ॥

इति श्री प्रेमावलि सम्पूर्णम् ।

अथ भजन कुण्डलिया लि०।

कुण्डलिया।

हंससुता-तट विहरिबौ करि वृन्दावन बास ।
कुञ्ज केलि मृदु मधुर रस प्रेमविलास उपास॥१॥
प्रेमविलास उपास रहै इक रस मन मांही ।
तिहि सुख को कछु कहौं मेरी मति है अस नाहीं॥
हितध्रुवयहरसअतिसरसरसिकनिकियौ प्रसंस ।
मुक्तनि छाड़ें चुगत नहि मानसरोवर हंस ॥२॥

दोहा।

रस भीज्यौं रस में फिरै रसनिधि जमुनातीर ।
चिन्तत रस में सनैं दोउ स्यामल गौर शरीर॥३॥

कुण्डलिया।

नवलरङ्गीले लाल दोउ करत विलास अनङ्ग ।
चितवनिमुसकनिकुवनिकच परसनिउरजउतङ्ग॥
परसनि उरज उतङ्ग चाह रुचि अतिही बाढ़ी।
भई फूल अँग अङ्ग भुजनि की कसनि है गाढ़ी॥
यह सुख देखत सखिनि के रहे फूल लोइनकमल।
हित ध्रुव कोकलानि में अति प्रवीन नागरनवल॥

कुण्डलिया ।

मदन-केलि को खेल है सकल सुखनि को सार ।
तिहिँ विहार रस मगन हैं और न कछु संभार ॥
और न कछु संभार हार करि प्राणपियारी ।
राखत उर पर लाल नेकहूं करत न न्यारी ॥
याही रसको भजन तो नित्यरहो ध्रुवहियसदन ।
कुञ्ज २ सुख पुञ्ज में करत केलि लीला मदन ॥

दोहा ।

केलि वेलि फूली रहत चितवनि मुसकनि फूल ।
तिहिँ लागे छवि फल उरज ढांके प्यार दुकूल ॥

दोहा ।

प्रेम तृषा को बेलि को केलि सदन रस आहि ।
परम रसिक नागरनवल पीवत जीवत ताहि ॥

कुण्डलिया ।

प्रेमहि सील सुभाव नित सहजहि कोमल बैन ।
ऐसे तिय पिय हीय में बसत रहो दिन रैन ॥
बसत रहो दिन रैन नैन सुख पावत अतिहीं ।
पियाप्रेम रस भरो लाल तन पै चितवतहीं ॥
देखो यह रस अति मधुर विसरावत सब नेमहि ।
हितध्रुवरसिकरासिदोउदिनहिविलसतरसप्रेमहि॥

दोहा।

एकै सहज सुभाव यौं एकै विधि सब भांति ।
एक रङ्ग रुचि एक रस एकै बात सुहाति ॥ ८ ॥

कुण्डलिया।

सीसफूल झलकानि छबि चन्द्रिका की फहरानि।
भ्रुवकै हियमें बसतहौ विधि चितवनि मुसकानि ॥
विधिचितवनि मुसकानि रह्यौ कौ उर में छाई।
तिहि रस केवल मनहि और कछु वै न सुहाई ॥
या सोभा पर वारिये कोटि कोटि रति ईस ।
रीझि रीझि नवचन्द्रिकनि जब लावत पियसीस ॥

दोहा।

सीसफूल सिखिचन्द्रिका सदा बसो मन मोर ।
अरु जब चितवत लाड़िलो पियतन नैननि कोर॥

कुण्डलिया।

ऐसे हिय में निवसिये नवकिशोर रसरासि ।
चितवनि अति अनुराग को करत मन्द मृदुहासि॥
करत मन्दमृदुहांसि दोउ निज प्रेम प्रकासहिँ ।
छके रहत मदमत्त रातिदिन मदन विलासहिँ ॥
हितध्रुव छवि सों कुञ्ज में दै अंसनि भुज वैसे ।
मेरी मति इत नाहि कहूं उपमा दै ऐसे ॥१२॥

दोहा।

नवकिशोर चितचोर दो॰ परम रसिक सिरमौर।
ऐसे हिय में मिलि रहो बचै नहीं कहूं ठौर ॥

कुण्डलिया।

राधावल्लभलाल की विमल धुजा फहरात ।
भगवतधरमहु जीति के निज प्रेमी ठहरात ॥
निजप्रेमी ठहरात नेम कछु परसत नाहीं ।
अलक लड़े दोउ लाल मुदित हँसि २ लपटाहीं।
हित ध्रुव यह रस मधुर है सार को सार अगाधा।
आवैं तबही होय में जब कृपा करैं श्रीराधा॥१४॥

दोहा।

महामाधुरी प्रेम निज आवै जिहि उर मांहि ।
नवधाहू तिहिँ रुचितनहिं नेम सबै मिटिजांहि॥

कुण्डलिया।

राधावल्लभलाड़िले अति उदार सुकुवारि ।
ध्रुव तो भूल्यो और तें तुम जिनि देहु बिसारि॥
तुम जिनि देहु बिसारि ठौर मोकों कहुँ नाहीं।
पिय रँगभरी कटाच्छ नेकु चितवै मो माहीं ॥
बढ़ै प्रीति को रीति बीच कछु होइ न बाधा ।
तुमहो परम प्रबोन प्रानवल्लभ श्रीराधा ॥ १६ ॥

दोहा।

अतिहि मृदुल नागरिनवल करुणासिन्धु उदार।
ऐसे शील सुभाव पर ध्रुव जावै बलिहार॥ १७॥

कुण्डलिया।

वृन्दाविपिन निमित्त है तिथि विधि मानै आन।
भजन तहां कैसे रहै खोयौ अपने पानि॥
खोयौ अपने पानि मूढ़ कछु समुझत नाहीं।
चन्द्रमनिहि लै गुहै काच के मनियनि माहीं॥
जमुनापुलिन निकुञ्जघन अद्भुत है रस कौ सदन।
खेलत लाड़िलीलाल जहँ ऐसो है वृन्दाविपिन॥

दोहा।

छोड़ अनन्य इक रस गहै वृन्दावन रस रीति।
विधि निषेध मानै न कछु करै भजन सों प्रीति॥

कुण्डलिया।

बार बार तौ बनत नहिँ यह संजोग अनूप।
मानुषतन वृन्दाविपिन रसिकनि सँग विविरूप॥
रसिकनि सँग विविरूप भजन सर्वोपरि आही।
मनु दै ध्रुव यह रङ्ग लहु पल पल अवगाही॥
जो छिन जात सो फिरत नहि करहु उपाइ अपार।
सकल सयानप छाड़ि भजि दुर्लभ है यह बार॥

दोहा ।

भजन रङ्ग सतसङ्ग मिलि ब्रन्दाबन सो खेत ।
एक कृपा तें जुरै सब याको चहिये हेत ॥२१॥
दस दोहा दस कुँडलिया कुण्डलभजनकौ आहि ।
बाहिर पाइ न दीजियै छिन २ यै अवगाहि ॥२२॥
भजनकुण्डली में रहौ पग बाहिर जिनि देहु ।
एकै जुगलकिशोर सौं करि ध्रुव सहज सनेहु ॥

इति श्री भजनकुण्डलिया सम्पूर्णम् ।

अथ बावनबृहत्पुराण की भाषा लिख्यते ।

दोहा ।

बावनब्रहद्पुरान को कछु इक कथा बनाइ ।
भक्तन-हित भाषा करी जैसें समुझी जाइ ॥ १ ॥
एक समै भृगुपिता सों प्रश्न करी यह आनि ।
करि प्रनाम ढाढ़ौ भयौ आगै जोरै पानि ॥ २ ॥
एक असङ्का बढ़ी उर चित्त रह्यौ बिसमाइ ।
सर्वोपरि सर्वज्ञ तुम हमहिँ देहु समुझाइ ॥३॥

नारदादि शुक स तजे किये भक्त सब गौन ।
आँचौ रज ब्रजतियन कौ यह धौं कारन कौन ॥
सुनहु पुत्र समझ्यौ न तैं रह्यौ भूलि भ्रम ज्ञान ।
सर्वोपरि ए हरि-प्रिया इनकी कौन समान ॥
बहुत बरष हम तप कियौ इनकी पदरज हेत ।
सो रज दुर्लभ सबनि कौं हमहूं बनी न लेत ॥
और तियनि में गिनहु जिनि ए श्रुतिकन्या आँहि ।
किय अधीन पिय सांवरो प्रेमचितवनी चाँहि ॥
अबलगि तैं समझ्यौ नहीं ब्रज कौ रंग रसाल ।
जो दिन बीते रस बिना बादि गयौ सब काल ॥
ब्रह्मज्ञान में रहे भ्रमि और न कछू सुहात ।
छाड़ि रसमई अमृतफल चाखत सूखे पात ॥
ज्ञानी खोजत ज्ञान में भजनी भक्त अपार ।
ते हरि ठाढ़े रहत हैं ब्रजदेविन के द्वार ॥ १० ॥
एक भक्त बन्दन करत नहिँ चितवत तिन ओर ।
ब्रजवनितनि के पगनि सों लावत मुकुट किशोर॥
निगमनि अस्तुति रुचत नहिँ करत हैं तत्व विचारि ।
जैसे भावत हेत सों ब्रजदेविन की गारि ॥ १२ ॥

अजहूं खोजत लहत नहिँ ऋषिमुनिजनको पाँति।
द्वार द्वार ब्रजसुन्दरिन फिरत चक्र को भाँति ॥
सब भक्तन के सिरन पर हरि ईश्वर नँदलाल।
ब्रज में सेवक ह्वै रहे अजब प्रेम की चाल ॥
एक भजन हित सों करत नीके मानत नाहिँ।
जैसे ब्रज-जुवती तिनहिँ ठेलि पगनि करि जाँहि॥
फिरत किशोर चकोर ज्यों बरसाने की ओर ।
घर घर प्यारो लगत है परे प्रेम को डोर ॥१६॥
चित्रसारि चितवत रहत जैसे घन तन मोर ।
चहूंओर ग्रीवा फिरत ज्यों प्रति चन्द चकोर ॥
जबहिँ द्वार वृषभान के आये नन्दकुमार ।
तिहँ छिन गति औरै भई रहो न देह सम्हार ॥
हाय हाय सब कोइ करै अद्भुत रूप निहारि।
कहा भयो या कुंवर कों देत प्रान सब वारि ॥
तनक भनक श्रवनन परी रहि न सकी अकुलाइ।
झाँकी सखियन संग तजि कुंवरि झरोखे आइ॥
लाज छाड़ि अति प्यार सों चितई कछु मुसकाइ।
सैनन में अति चतुर पिय रहे चरन सिर नाइ॥

अंग अंग प्रति फूल भइ आनँद उर न समाइ ।
भागमानि पहिचानि करि चले लाल सिर नाइ ॥
सर्वोपरि राधाकुंवरि पिय प्राननि के प्रान ।
ललितादिक सेवत तिनहिँ अतिप्रवीन रस जान॥
पहली पैरी प्रेम की ब्रज कीनो निस्तार ।
भक्तनहित लीला धरी करुनानिधि सुकुमार ॥
रच्यो रास किय वचन हो आई मिलि ब्रजनारि ।
प्रेमफाग खेलो जहां सब संकोच निवारि ॥२५॥
ऋषिमुनि जोगिन के हिये कबहुं न लसैं ब्रजचन्द
गहि लीनो ब्रजसुन्दरिन डारि प्रेम को फन्द ॥
जाइ ब्रजबनिता कहैं सोइ लेत हैं मानि ।
नाचत ज्यों कठपूतरी तिनके आगे आनि ॥२७॥
बहुत भांति लीला रचत तैसइ भक्त अपार ।
अपनी २ रुचि लिये करत भक्ति विस्तार ॥२८॥
और चरित बहु भांति के कीने हैं जग केत ।
दूजो कारन नाहिं कछु ते सब भक्तनि हेत ॥२६॥
अर्जुन पूछी कृष्ण सों मेरो एक सँदेहु ।
कौन भक्त प्यारे तुम्हें यह मोसो कहि देहु ॥३०॥

भगत जगत में बहुत हैं तिनकौं नाहिं प्रमान ।
वैकुण्ठहु ते अधिक हैं मथुरा मण्डल जान ॥३१॥
तामें ताहू ते सरस ब्रजमण्डल सुख खानि ।
ठौर कोउ जिहि सम नहीं कहिजे कौन बखानि ॥
अति सुदेस माया रहित इकइस जोजन भूमि ।
जहां सहाइ ब्रजवास को रहत कृपा दिन भूमि ॥
मध्य रजत मुकुटमनि वृन्दाबन रस कन्द ।
रस में सुख में तेज में झलकत कोटिक चन्द ॥
एक रङ्ग रुचि एक रस अद्भुत नित्य विहार ।
जहां किशोरा लाड़िली करो लाल उर हार ॥३५॥
निसिदिन तो पहिरे रहत रूपक मनि उजियार ।
ता रस में लटके छके अधर सुधा आधार ॥३६॥
अङ्ग अङ्ग मन मन मिले नैननि नैन विशाल ।
चाह वेलि प्यारी बनी छवि के लाल तमाल ॥
जोरी दुलहा दुलहिनी मोहनि मोहन आहि ।
परत न अन्तर निमष को जोवत रूपहि चाहि ॥
महा मधुर रसमाधुरी नव नव वयस किशोर ।
अद्भुत रस में मगन है नहिं जानत निसि भोर ॥

नव किशोर ता माधुरी सब गुन बिलसे सङ्ग ।
जुगलचरन सेवत रहैं रँगो प्रेम के रङ्ग ॥ ४० ॥
नित्य लाड़िली लाल दोउ नित बृन्दावन धाम ।
नित्य सखी ललितादि निजु सेवत स्यामास्याम ॥
ब्रज में सो लीला चरित भयौ जु बहुत प्रकार ।
सबकौ सार बिहार है रसिकनि कौ निरधार ॥
बृन्दावन महिमा कछू कहौं सोइ सुनि लेह ।
द्रुम द्रुम प्रति अरु लता प्रति लपट्यौ रहत सनेह ॥
महाप्रलै जबहीं भयौ रह्यौ न कछुवै आन ।
गिरिबन व्योम न भूमि रहि नहि नछत्र ससिभान ॥
सर सरिता सागर मिले अमित मेघ की धार ।
तीनि लोक जल चढ़ि गयौ बूड़ि गयौ संसार ॥
कोटि २ उतपति प्रलै होत रहत इहि भाति ।
जैसे अरहट की घरी भरि २ ढरि ढरि जाति ॥
लोकपाल लीला चरित अब कछु दीसत नांहि
निगम रिचा भूली भ्रमै चरत फिरै तिहि मांहि ॥
सहज बिराजत एक रस बृन्दावन निज भौन ।
मायाजल परसत नहीं अरु माया को पौन ॥४८॥

न्यारौ चौदह लोक तें वृन्दावन निज धाम ।
इकछत विलसत रहत नित सहजहि स्यामास्याम ॥
चहूँ ओर वृन्दाविपिन सेवत सब औतार ।
करत विहार विहारि तहँ आनँद रङ्ग विहार ॥
निगमनि सोच विचारि कै यह ठहराई चित्त ।
भजन जहाँ को कीजिये इकछत रहै जु नित्त ॥
तब लागे अस्तुति करन बाढ्यौ उर आनन्द ।
जानै पूरन सरब पर श्रीवृन्दावन चन्द ॥ ५२ ॥
एकै पुरुष किशोर वर दूजौ नाहिन कोइ ।
जाकी इच्छा सहज यह सबकौ कौतिक होइ ॥५३॥
गावत जाको सुजस जस आनँद बढ्यौ अपार ।
देखि कछू छवि की छटा वृन्दाविपिन विहार ॥
रूप माधुरी देखि कछु विवस भये मुरझाइ ।
बाढ़ी रुचि की चाह अति रहे ललचाइ लुभाइ ॥
काम कामना अति बढ़ी यह उपजी उर आइ ।
खेलै ऐसे रूप संग बनिता कौ तन पाइ ॥५६॥
तिन प्रति तब बानी भई यह श्रुति लीनी मानि ।
प्रगट होहु ब्रज जाइ तुम हमहु प्रगटिहैं आनि ॥

तहां सबै सुख पाइहौ जो जो करि मन आस ।
हम तुम एकहि सङ्ग मिलि करिहैं रासविलास ॥
जाकी बानी भइहि सो सखी प्रगट भइ आइ ।
वेदहुं के आनँद भयौ अदभुत दरसन पाइ ॥५९॥
एक असङ्का बढ़िहि उर चित्त रह्यो बिस्माइ ।
कछुयक नित्य विहार जस हमहिं देहु समझाइ ॥
प्रभु आज्ञा इक सो भई सो पहिले करि लेउँ ।
ता पीछे जो पूछिहौ ताकौ उत्तर देउँ ॥ ६१ ॥
सखी कियौ जब चिन्तवन श्रीपति प्रगटे आइ ।
प्रभु आज्ञा तिनसौं कही सृष्टि रचावहु जाइ ॥
ऐसेही अवतार सब लीन्हें तहां बुलाइ ।
अपनो अपनो काज तुम कीजो समयौ पाइ ॥
धर्मराज सौं कहि तबै हमरो बच सुनि लेहु ।
जाके रञ्चक भक्ति है ताहि कष्ट जिनि देहु ॥६४॥
भक्तनि छाड़ी सबनि कौ तेरे आगे ल्याउ ।
हरिहि भजन तें विमुख जे तिनकौ तुम समुझाउ ॥
पुनि फिर वेदनि सो कह्यौ जो पूछौ सुनि लेउ ।
नित्यहि नित्य विहार करि यामें नहिँ सन्देहु ॥
नित्य सहज वृन्दाविपिन नित्य सखी ललितादि ।
नित्यहि विलसत एकरस जुगलकिशोर अनादि ॥

नवलप्रेम सों रँगे दोउ नित्यहिँ नवलकिशोर ।
होत रहत उतपति प्रलै नहिँ जानत किहि ओर ॥
बेदहूं जानै अंस सब मिथ्यौ भर्म तिहि काल ।
समुझे पूरन सबनि पर नित्य बिहारीलाल ॥७०॥
अपने अपने सदन कौ कीनो सबनि पयान ।
ता पाछे सोई सखी भई जु अन्तरध्यान ॥ ७१ ॥
श्रीपति चितयौ आपही पुरुष प्रकृत की कोद ।
तिहि छिन उपजी हीय में कीजै जगतविनोद ॥
प्रथमहि माया तें भयो महोतत्व अहँकार ।
अहङ्कार त्रिविधा भयो तातें जग विस्तार ॥७३॥
त्रिगुन तें प्रगटे तीनि गुण ब्रह्मा विष्णु महेस ।
ता पाछे सुर असुर नर लोकपाल स्वर्गेस ॥७४॥
दोइ मुहूरत में रचे चौदह लोक बनाइ ।
बड़ी प्रभूता पुरुषता कापै बरनी जाइ ॥ ७५ ॥
बहुत भांति लीलाचरित तिनकौं नाहिन पार ।
सोइ भुल्यौ भरम्यौ फिरै कियो चहै निरधार ॥
सब तजि जुगलकिशोर भजि जो चाहत विश्राम ।
हित ध्रुव मन बच हेत सों सेवौ स्यामास्याम ॥७७॥

इति श्रीबृहद् बामनपुराण की भाषा सम्पूर्णम् ।

अथ भक्तनामावली लिख्यते।

दोहा।

हरिवंश नाम ध्रुव कहतही बाढ़ै आनँद वेलि ।
प्रेम रँगी उर जगमगै नवल जुगल वर केलि ॥१॥
निगम ब्रह्म परसत नहीं सो रस सबतै दूरि ।
कियौ प्रगट हरिवंश जी रसिकनि जीवनि मूरि ॥
चन्दचरन अंबुज भजहि मनक्रम वचन प्रतीति ।
वृन्दाबन निज प्रेम की तब पावै रस रीति ॥३॥
कृष्णचन्द के कहतही मन कौ भ्रम मिटि जाइ ।
विमल भजन सुख सिन्धु मैं रहै चित्त ठहराइ ॥
गोपिनाथ पद उर धरै महागोप्य रस सार ।
विन विलम्ब आवै हियै अद्भुत जुगल विहार ॥५॥
पति कुटुम्ब देखत सबै घूँघट पट हिय डारि ।
देह ग्रेह विसर्‌यौ तिन्हैं मोहनरूप निहारि ॥६॥
धीर गँभीर समुद्र सम सील सुभाव अनूप ।
सब अँग सुन्दर हँसत मुख सुन्दर सुखद सरूप ॥
शुक नारद ऊधव जनक प्रहलादिक सनकादि ।
ज्यौं हरि आपन नित्य है त्यौं ये भक्त अनादि ॥

प्रगट भयौ जयदेव मुख अद्भुत गीत गोविन्द ।
कह्यो महासिङ्गार रस मण्डित प्रेम मकरन्द ॥९॥

पद्मावति जयदेव प्रेम बस कीने मोहन ।
अष्ट पद दीजो कहै सुनत फिरै ताके गोहन ॥
श्रीधर स्वामी तौ मनौ श्रीधर प्रगटे आनि ।
तिलकभागवत किय रचौ सब तिलकनि परिवानि॥
रसिक अनन्य हरिदास जो गायौ नित्य विहार ।
सेवा हूं मैं दूरये कि विधि निषेध जञ्जार ॥१२॥
सघन निकुञ्जनि रहत दिन बाढ्यौ अधिक सनेह ।
एक विहारी हेत लगि छाड़ि दिये सुख देह॥१३॥
रङ्क छत्रपति काहु की धरी न मन परवाह ।
रहे भीजि रस प्रेम में लीन्हें कर करवाह ॥१४॥
वल्लभसुत विट्ठल भये अति प्रसिद्ध संसार ।
सेवा विधि जिहि समै की कीनी तिन व्यवहार॥
राग भोग अद्भुत विविधि जो चहिये जिहि काल ।
दिनहि लड़ावैं हेत सों गिरधर श्रीगोपाल ॥१६॥
गौड़ देस सब उद्धर्यौ प्रगट कृष्ण चैतन्य ।
तैसहि नित्यानन्द हूं रसमय भये अनन्य ॥१७॥

पावतहो तिनको दरस उपजै भजनानन्द ।
विनशो भ्रम छुटि जाहि जो सब माया के फन्द ॥१८॥
रूप सनातन मन बढ्यो राधाकृष्ण अनुराग ।
जानि विश्व नश्वर सबै तब उपज्यो वैराग ॥१९॥
विषसमान तजि विषयसुख देस सहित परिवार ।
बृन्दावन को चलत यौं ज्यों सावन जलधार ॥
टन तें नीचो आप को जानि बसे बन माहि ।
मोह छांड़ि ऐसे रहै मनो चिन्हारिहु नाहि ॥२१॥
रघुनन्दन सारङ्ग जो जीवति पाछे आय ।
कृष्ण कृपा करि सबै आनि निज धाम बसाय ॥
भजन रासि रघुनाथ जो राधाकुण्ड स्थान ।
लीन तक्र ब्रज को लयो परस्यो नहिँ कछु आन ॥
वन्दन करिके चिन्तवन गौर स्याम अभिराम ।
सोवतहूं रसना रटै राधाकृष्ण सुनाम ॥ २४ ॥
श्रीविलास ब्रजनाथ अरु चन्दमकन्द प्रवीन ।
मनमोहनपद कमल सौं अधिक प्रीति जिन कीन॥
महापुरुष नन्दन भये करि तन सकल सिँगार ।
सखी रूप चिन्तत फिरै गौर स्याम सुकुवार॥२६॥

नैन सजल तिहिँ रँगमगे चित पायौ विश्राम ।
विवस वेगि ह्वै जात सुनि लाल लाड़िलो नाम ॥
कृष्णदास हते जङ्गलौ तेऊ तैसी भांति ।
तिनके उर झलकत रहै हेम नीलमनि कांति ॥
जुगल प्रेम रस अवध में पर्यो प्रबोध मन जाइ ।
वृन्दावन रसमाधुरी गाई अधिक लड़ाइ ॥२९॥
अति विरक्त संसार ते बसे विपिन तजि भौन ।
प्रीति सहित गोपाल भट सोये राधा रौन ॥३०॥
घुमड़ी रस में घुमड़ि रहि वृन्दावन निज धाम ।
बंसीबट तट रास के सोये स्यामास्याम ॥ ३१ ॥
भट नारायण अति सरस ब्रजमण्डल सों हेत ।
ठौर ठौर रचना करी प्रगट कियौ सङ्केत ॥३२॥
बर्धमान श्रीभट्ट अरु मङ्गल ब्रज वृन्दावन गायौ ।
करि प्रतीति सर्वोपर जान्यो तातें चित्त लगायौ ॥
भट्ट गजाधरनाथ भट विद्या भजन प्रवीन ।
सरस कथा वाणी मधुर सुनि रुचि होत नवीन ॥
गोविन्दस्वामी गङ्ग अरु विष्णु विचित्र बनाइ ।
पिय प्यारी को जस कह्यौ रागरङ्ग सों गाइ ॥३५॥

मनमोहन सेवा अधिक कीनी है रघुनाथ ।
न्यारो रस के भजन की बात परो तिहि हाथ ॥
गिरधरस्वामी पर कृपा बहुत भई दृढ़ कुञ्ज ।
रसिक रसिकनी को सुजस गायो तिहिँ रसपुञ्ज॥
वीठल बिपुल विनोद रस गाई अद्भुत केलि ।
विलसत लाड़िलिलालसुख अंसनिपरभुजमेलि॥
विहारीदास निज एक रस जो स्वामी की रीति।
निरवाही पाछे भली तोरि सबनि सो प्रोति ॥
मत्त भयो रसरङ्ग में करी न दूजो बात ।
विन विहार निज एक रस और न काछू सुहात॥
वर किशोर दोउ लाड़िले नवलप्रिया नवपीय ।
प्रगट दखियत जगत में रसिक व्यास के हीय ॥
कहनी करनी करि गयो एक व्यास इहि काल ।
लोक वेद तजि के भजे राधावल्लभलाल ॥ ४२ ॥
प्रेम मगन नहि गन्यो कछु वरनावरन विचार ।
सबनि मध्य पायो प्रगट लै प्रसाद रस सार ॥४३॥
सेवक की सर को करे भजन सरोवर हंस ।
मन बच के धरि एक व्रत गाए श्रीहरिवंस ॥४४॥

बंश विना हरिनाम हूं लियौ न ताके टेक ।
पावे सोई वस्तु को जाके है व्रत एक ॥ ४५ ॥
कहा कहौं नहि कहि सकौं नरवाहन कौ भाग।
मुख जाकौ नाम धर्‍यौ निज बानी अनुराग ॥
अति अनन्य निज धर्म में नायक रसिक मुकुन्द ।
बसे विपिन रस भजन के छाड़ि जगत दुख द्वंद ॥
परम भागवत अति भये भजन मांहि दृढ़ धीर ।
चतुर्भुज वैष्णवदास को बानी अति गम्भीर ॥४८॥
सकल देस पावन कियौ भगवत जसहि बढ़ाइ ।
जहां तहां निज एक रस गाई भक्ति लड़ाइ ॥४९॥
परमानन्द किशोर दोउ सन्त मनोहर खेम ।
निर्वाह्यौ नीके सवनि सुंदर भजन कौ नेम ॥५०॥
छाड़ि मोह अभिमान सब भक्तनि सों अति दीन।
वृन्दावन बसिकै तिनहि फिरि मन अनत न कीन॥
लालदास स्वामी सरस जाके भजन अनूप ।
वरन्यौ अति दृढ़ अच्छरनि लाललाड़िलौ रूप ॥
अधिक प्यार है भजन सों और न कछू सुहात ।
कहतसुनतभगवतजसहि निसिदिनजाहिविहात ॥

बालकृष्ण गति कहा कहै कैसेहुं कहत बनै न ।
रूप लाड़िलो लाल को झलमलात तिहि नैन ॥
अति प्रवीन पण्डित अधिक लै सवर्ग को नाहि ।
कीनी सेवा मानसी निसिदिन मन तिहि मांहि ॥
ग्यानू नाहरमल्ल को देखो अदभुत रीति ।
हरीवंशपद कमल सों बाढ़ो दिन दिन प्रीति ॥
कहा कहा मोहन सदा ताकी गति भइ आन ।
व्यासनन्द अन्तर सुनत तजी तिनहिं छिन प्रान ॥
विट्ठलदास मुरलीधरन चरन सखे सब काल ।
तैसे दास गोपाल हूं गाये ललना लाल ॥५८॥
सुन्दर मन्दिर को टहल कीनो अति रुचिमान ।
सफल करी सम्पति सकल लगा ठिकानै आन ॥
अङ्गीकृत ताको कियो परम रसिक सिरमौर ।
करुनानिधि बहु कृपा करि दीनी सनमुख ठौर ॥
बड़ी उपासिक गौरिया नाम गुसाईदास ।
एक चरन ब्रजचन्द बिन जाकै और न आस ॥
नेह नागरी दास अति जानत नीकी रीति ।
दिन दुलराई लाड़िली लाल रँगीली प्रीति ॥

व्यासनन्द पद सों अधिक जाके दृढ़ विस्वास ।
जिहि प्रताप यह रस लह्यौ अरु ब्रुन्दाबनवास ॥
भलो भांति सेयौ विपिन तजि बंधुनि सों हेत ।
सूरभजन में एकरस छाड्यौ नाहिन खेत ॥६४॥
बिहारिदास दम्पति जुगल माधौ परमानन्द ।
ब्रुन्दाबन नीके रहे काटि जगत को फन्द ॥६५॥
नीको भांति मुकुन्द का कैसे कहत बनै न ।
बात लाडिलीलाल की सुनि भरि आवत नैन ॥
मनबच करि विस्वास धरि मानिहि एकै काम ।
मात पिता तिय छाड़िकै बस्यौ ब्रुंदाबन धाम ॥
अन्तकाल गति का कहौं कैसहू कही न जाति ।
चतुरदास ब्रुन्दाविपिन पायौ अच्छी भांति ॥६८॥
चिन्तामनि बातनिसरस सेवा माहि प्रवीन ।
कहत विविधि भगवत जसै छिन २ उपजत बीन ॥
नागर अरु हरिदास मिलि गाये नित हरिदास ।
ब्रुन्दाबन पायौ दुहुनि पूजी मन की आस ॥७०॥
नवल कलानी सखिन के मनहो अति अनुराग ।
लाल लड़ैती कुँवरि को गावै भाग सुहाग ॥७१॥

भली भांति वृन्दा अली अति कोमल सुसुभाव ।
कृपा लड़ैतो कुँवर की उपज्यौ अदभुत भाव ॥
कीनी रास विलास बहु सुख बरषत संकेत ।
रचना रचि कलपान रचि मण्डनिदास समेत ॥
सेवा राधारमन की भक्तनि के सनमान ।
सा तै बसि जमुना कियौ तिहि सम नहिँ कौ आन॥
ते उपासक अधिक है या रस में हरि हास ।
निसिदिन बीते भजन में राधाकुण्ड निवास ॥
बरसाने गिरिधर सुहृद जाके ऐसो हेत ।
भोजनहूं भक्तनि विना धर्यौ रहै नहि लेत ॥७६॥
नन्ददास जो कछु कह्यौ रागरङ्ग में पागि ।
अच्छर सरस सनेह में सुनत श्रवन उठि जागि ॥
रमन सदा अदभुतहु ते करन कित्त सुढार ।
बात प्रेम की सुनतही छुटत नैन जलधार ॥७८॥
बावर सौ रस में फिरै खोजत नेह की बात ।
अच्छे रस के वचन सुनि वेगि विवस ह्वै जात ॥
कहा कहौं मृदु भाव अति सरस नागरी दास ।
विहारि विहारी को सुजस गायौ हरषि हुलास ॥

परमानँद माधौ मुदित नवकिशोर कल केलि ।
कह्यो रसीली भांति सौं तिहिँ रस में रहि मेलि ॥
सोयौ नाकी भांति सौं ग्रोसंकित स्थान ।
रह्यौ बड़ाई छाड़ि के सूरज द्विज कल्यान ॥८२॥
खड्गसेन के प्रेम को बात कहो नहि जात ।
लिखत ललित लाला करत गये प्रान तजि गात॥
ऐसहि राघौदास को सुनौ बात यह कान ।
गावत करत धमारि हरि गये छूटि तब प्रान ॥
बरनभक्त अद्भुत भयौ और न कछू सुहात ।
अङ्गनि को छवि माधुरी चिन्तत जाहि बिहात ॥
रोमांचित तन पुलक है नैन रहै जल पूरि ।
जाके आसा एक है बृन्दाबन की धूरि ॥ ८६ ॥
कहा कहौं महिमा सुभग भई कृपा सब अङ्ग ।
बृन्दाबन दासो गह्यौ जाइ सखिनि को सङ्ग ॥
लाज छाड़ि गिरधर भजी करी न कछु कुलकानि ।
सोई मीरा जग विदित प्रगट भक्ति की खानि ॥
ललिताहू लइ बोलि कै तासौं हो अति हेत ।
आनँद सौं निरखत फिरै बृन्दाबन रस खेत ॥८८॥

नृत्यत नूपुर बाँधि के गावत लै करतार

विमल हीय भक्तनि मिलो तृन सम गन्यौ सँसार ॥

बंधुनि विष ताकों दियो करि विचारि चित आन।

सो विष फिरि अमृत भयो तब लागे पछतान ॥

गङ्गा जमुना तियनि में परम भागवत जानि ।

तिनकी बानी सुनतही बढ़ै भक्ति उर आनि ॥

कृष्णदास गिरिधरन सों कीनो सांची प्रीति ।

कर्म धर्म पथ छाड़ि के गाई निज रसरीति ॥

पूरनमल जसवन्त जो भोपति गोविन्दास ।

हरीदास इन सबनि मिलि सेयौ नित हरिदास ॥

परमानँद अरु सूर मिलि गाई सब ब्रज रीति ।

भूलिजात विधिभजन को सुनि गोपिनिको प्रीति॥

माधौदास बरसानि यों ब्रजविहार के खेल ।

सदा पगे चित सों रहैं हरिजन सौ मेल ॥६६॥

गाई नीकी भांति सो कवितरीति भल कीन ।

मनमोहन अपनाइ के अङ्गीकृत करि लीन ॥६७॥

जिन २ भक्तनि प्रीति की ताके बस भइ आनि।

से न छोड़ नृप टहल की नाम देव कछु छानि ॥

जगत विदित पीपा धरनि अरु रैदास कबीर ।
महाधीर दृढ़ एक रस भरे भक्ति गम्भीर ।९९॥
जगन्नाथ वत्सल भगत कीन्हों जस विस्तार ।
माधौ भूख्यौ जानि कै ल्याये भोजन थार ॥१००॥
एक समै निसि सीत सों कांपन लाग्यौ गात ।
आनि उढ़ाई तिहिँ समै अपने कर सकलात ॥
विल्वमँगल जब अँध भयौ आपुन कर गह्यौ आइ ।
भक्तनि पाछै फिरत यों ज्यों बछरू सँग गाइ ॥
रामानँद अंगद सोई हरिव्यास अरु कीत ।
एक एक के नाम ते सब जग होइ पुनीत ॥१०३॥
रांका बांका भक्त है महाभजन रसलीन ।
इन्द्रासन के सुखनि को मानत तृन तें हीन ॥
नरसी हो अति सरस हिय महादेव सम तूल ।
कह्यौ सरस सिंगार रस जानि सुखनि कौ मूल ॥
दीनो ताकौं रीझि कै माला नन्दकुमार ।
राखि लियो अपनो शरन विमुखनि मुख दै छार ॥
जहां २ भक्तनि कछु परत है सङ्कट आनि ।
तहां २ सब आपनै धरत अभय को पानि ॥१०७।

भगत नरायन भक्त सब धरे होय दृढ़ प्रीति ।
वरनै अच्छौ भांति मौं जैसी जाकी रीति ॥१०८॥
रसिकभक्त भूतलघनै लघुमति क्यौं कहि जाहिं ।
बुधि प्रमान गाये कछू जे आये उर माहिं ॥१०९॥
हरि कौ निज जस तें अधिक भक्तनजस पै प्यार ।
यातै यह माला रचौ करि ध्रुव कण्ठ सिंगार ॥
भक्तन की नामावली जो सुनि है चित लाइ ।
ताके भक्ति बढ़ै घना अरु हरि होइ सहाइ ।१११।
एक बार जिहि नाम लौ हित सौ ह्वै अति दीन ।
ताकौ अंगन छाड़ि है धुव अपनौ करि लीन ॥
एसे प्रभु जिन नहि भजे सोई अति मति हीन ।
देखि समुझि या जगत में बुरौ आपनौ कौन ॥
अजहूं सोच विचारि के गहि भक्तनिपद ओट ।
हरिकृपाल सब पाछिला छमि है तेरी खोट ।११४॥

इति श्रीभक्तनामावली सम्पर्णाम ।

अथ मानसिंगार लिख्यते ।

दोहा ।
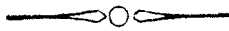
हरिवँशहँस आवत हिये होत जु अधिक प्रकास ।
अद्भुत आनँद प्रेम कौ फूलै कमल विलास ॥१॥
नवलकिशोरी सहजही झलकत सहजहि जोति ।
उपमा दै वरनौं तिनहि यह ढीठ्यौ अति होति ॥
रूपरङ्ग कौ सार तन सार माधुरी अङ्ग ।
चन्दसार कौ मोद मुख कांतिसार कौ रङ्ग ॥३॥
ललित लड़ैती कुंवरि कौ वरनौं कछु इक रूप ।
पियतन मन जो पूरि रहि मोहन सहज सरूप ॥
अतिही मोहनी मोहनी पियमन सुख की सीव ।
उपमा सब सेवत तिनहि कीनैं नीची ग्रीव ॥५॥
नवलछविली बदन मन आनँद मोद कौ फूल ।
इक रस फूल्यौ रहत दिन पियतन जमुना कूल॥
कुण्डलदुति अरु मुखप्रभा राजत ऐसी भांति ।
झलमलात मिलि एक ठां मानो रवि ससि कांति ॥
चिकुर चन्द्रिका रचि विचित्र चिर मानौं हरवानि ।
मनो घटा सिङ्गार की जुरी चन्दपद आनि ॥८॥

लटकनि बेनी की ललित फूलनि गुहो सुढार ।
मनो हरिसिजुत में रते उतरत रवि जो धार ॥
सीसफूल रहि झलकि कै तैसो मांग सुरङ्ग ।
मानो छत्र सुहाग को लियेऽनुरागहि सङ्ग ॥१०॥
निरखि अरुन बेंदी छबी मति की गति भइ मूक ।
मानौ विधि पूज्यौ रविनि आनि फूल बंधूक ॥
बङ्कट भृकुटी सों हनो अलक जुरी तहँा आनि ।
मानों पियमन मीन कौं बनसी राखी बानि ॥
लोइन तो श्रवननि लगे बिच कुण्डल झलकात ।
मनों कञ्ज हित जानि कै पूछन गये कछु बात ॥
अञ्जनजुत चंचल चपल अंचल में न समाहि ।
अति बिसाल उज्जल सुरँग चुभे लाल उर माहि ॥
सहजहि सुच्छम अलक छुटि परी पलक पर आइ ।
मनहुँ युगल पर नागिनी पिंजरे राखी लाइ ॥
श्रवननि छवि ताटङ्क दुति रही गर्डनि झलकाइ ।
मनों भान आभा परी कञ्जदलनि पर आइ ॥१६॥
कहि न सकत बानिक बनक अधर सुरङ्ग निहारि ।
मानों शुक झुकि रहि छकी मन में कछू विचारि ॥

बेसरि की थरहरनि छबि मीनरिकी मनु ऐन ।
हरि हिरदै मन-मीन मनु ताको चितवत लैन ॥
अरुन स्याम उज्जल दसन अति छबि सों झलकाईं ।
कञ्ज में अलि मुक्तनि सहित रँगे मनों बन्दनमाहिं ॥
सोभा निधिवर चिबुक पर स्याम बिन्दु सुख देत ।
रहि गयो अलि सावक मनों कञ्जकली रस हेत ॥
नीलबिन्दुउपमादुतियकहा कहौं अतिहिं अनूप ।
मानों पियामन बिबस ह्वै पर्यो प्रेम के कूप ॥
द्वै लर मोतिनि कण्ठमें डारी सब छबि निन्द ।
मानों पूरन चन्द पर प्रगट्यो दुतिया इन्दु ॥२२॥
जलज-हार हीरावली बिचि बिचि मनि झलकाहिं ।
मानो मैन तरङ्ग हैं रूप सरोवर माहिं ॥२३॥
रतन खचित चौकी ललित जगमग जगमग होत ।
बिबि-गिरिकञ्चन बीचमनुछबिरबिकियोउदोत ॥
भूषनजुत मृदु भुजनि को निरखि लाल रहे भूलि ।
मानों छबि को लता है फूलनि सों रही फूलि ॥
उरज पीन कटि छीन छबि नवकिशोर रहे चाहिं ।
मानों आनन्द बेलि सों लागे सुख फल आहिं ॥

आई उपमा और उर बस किये मोहन मैन ।
मुंदे कछु देखत मनों खुले कमल पिय नैन॥२७॥
अति सुदेस अँगिया बनी सोधे सनी सुरङ्ग ।
पिय मन अलितहँ भ्रमत हैं तजत न कबहूं सङ्ग ॥
नीलाम्बर छबि फबि रही मन में रहत बिचार ।
मनों सार सिँगार के आढ़े बर सुकुवारि ॥२८॥
सारी पीरी जरकसी झलकति छबि सों जोति ।
कुन्दन की बरिषा मनों स्वर्णनदी में होत ॥३०॥
जब सुरङ्ग सारी सुरति हरितहि भरी सुहाग ।
अन्तर भरि मनु उमगि के प्रगस्यो पिय अनुराग ॥
राजत सुन्दर उदर पर अद्भुत रेखा तीनि ।
देखत सोवा रूप की लाल भये आधीन ॥ ३२ ॥
सोभित नाभि गँभीर ढिग रोमावलि अनुसार ।
मानों निकसी कमल तें सूछम रेख सुढार॥३३॥
पृथु नितम्ब ऊपर बनी मनिमै किङ्किनि-जाल ।
फिरि आई चहुंओर मनु छबि दीपनि की माल॥
अति सुढार सुठि सुमिल बनि मनिमै जेहरि चारि ।
चलनि छबीली भाँति पर मत्त-मरालनि वारि ॥

पाइल नूपुर की झनक होतहिं मन्दहिं मन्द ।
मानु सावक कलहंस के कूजत भरे अनन्द ॥
चरन कमल कोमल सुरँग मधुप लालमन-मत्त ।
दृग के जल छ्वावत रहत कर कमलनि सेवन्त ॥
मेहँदी कौ रँग छबि रह्यौ नख मनि झलक अपार।
मनौं चन्द कमलनि मिलि रहौ न और सँभार ॥
करि सिँगार दियो दीठि उर स्यामल विन्दु कपोल।
मुसकनि छबि बदलै मनो राख्यौ पिय मन ओल ॥
अपनौ जस कछु रुचत नहिं ऐसी लाल की बात ।
प्रानप्रिया गुन सुननहित सहस कान ह्वै जात ॥
सब अङ्ग अद्भुत भामयुत सहज रूप की खानि।
एती मति मोपै कहाँ नख छबि सकौं बखानि ॥
उपमा तौ सब जे कही ऐसौ चित्त बिचारि ।
जैसे दिनकर पूजिये आगे दीपक बारि ॥ ४२ ॥
रूप माधुरी सहजहीं झलकत नये तरङ्ग ।
उपमाहू सब सफल भई बड़ी ठौर के सङ्ग॥४३॥
याही तें कछु बक कही पाइ बात को फेर ।
जैसे रती कहे मते समुझै सोभा मेर ॥ ४४ ॥

अंग अंग मृदु-माधुरी अतिहिं रसीली आहिं ।
तैसे मधुर किशोर पिय जीवत तिनको चाहि ॥
ललित लड़ैती कुँवरि बिन और न कछू सुहाइ।
नेकु नैन की कोर के लीनों चित्त चुराइ ॥४६॥
अमित कोटि ब्रह्माण्ड की प्रभुता मन लगि थोर।
कर जोरे चितवत रहैं बङ्क दृगनि की ओर ॥
देखौ बलि या प्रेम कौ सर्वस लीनों छीन ।
महामोह गज-मत्त पिय बिन अंकुस बस कीन ॥
अखिल लोक की साहिबी दीनी तृन ज्यौं डारि।
छिन छिन प्रति सेवा करें रहे अपनपौ हारि ॥
पाना पान सिंगार सब करत आपने हाथ ।
बँधे जु प्रेम अनङ्ग गुन फिरत प्रिया के साथ ॥
खेलत मन ऐसे भये जैसे खेलत जूप ।
तन मन धन सब हारि कै भये दीन जस भूप ॥
नवकिशोर के प्रेम की बात कही नहिँ जाइ ।
सहचरि जे निज कुवरि की तिनके गहते पाइ ॥
नैन सैन चितवनि चपल मनमुक्ता छबि ऐन ।
सखी सबै मनो हंसनी चुगतिहिँ भरि भरि नैन ॥

प्रिय की रीति पिरीत सुनि हिय में यहै हुलास ।
दासी जह है प्रिया की तिनके ह्वै रहे दास ॥५४॥
अब सुनि प्यारे लाल की कविहि नाहिने ओर ।
बँधे लाड़िली प्रेम सों ऐसे रसिक किशोर ॥५५॥
कुवरि माधुरी रूप की सोऊ कहत बनै न ।
घटि बढ़ि कही न जात है जैसे दोऊ नैन ॥५६॥
मोहन के मोहन सबै अङ्ग रहे झलकाइ ।
नेकु चितै मुख माधुरी नैंन गिरत मुरझाइ ॥
प्रथमहि प्रियहि सिंगारि के पिय को करत सिँगार।
सोभा उभै निहारि सखि करति प्रान बलिहार ॥
इक रस रूप समान वय दम्पति नवलकिशोर ।
नख सिख बानी एक सा छैल छबीली जोर ॥५८॥
है मूरति सिंगार की पुनि कीनों सिङ्गार ।
मिले रूप के सिन्धु है अब को पावै पार ॥६०॥
अब सुनि रङ्गविहार की बात न कबहु अघात ।
इक रस प्रेम छके रहै और न कछू सुहात ॥६१॥
ललित उरज पै रस परत ललित रँगीले लाल ।
राजत अब सोभा सबै सङ्ग छबीली बाल ॥६२॥

लाल ललित अब लाड़िली नवलछबीली भांति ।
प्रेम प्यार के चाइं सों प्रीतम उर लपटाति ॥६३॥
सब अँग सुन्दर सोहनी रूप रासि सुकुवारि ।
महामोह मनमोहनी बस किय नेकु निहारि ॥
लाल रँगीली सङ्ग रँग करत विनोद अनङ्ग ।
कबहूं बातन में हँसी कबहूं भरत उछङ्ग ॥६५॥
कबहूं कुच कर जनि छुवत भौंह भङ्ग ह्वै जात ।
अति प्रवीन रस खेल में चूकत नहि कोउ घात ॥
अन्तकाल पाइनि परत मृदु मुख हाहा खात ।
ऐसे वचननि सहचरी सुनि २ सब बलिजात ॥
विविधि भांति रतिकेलि रँग छिन २ औरै ओर ।
करत रँगीले लाल दोउ परे रसिक सिरमौर ॥
कमल कपोलनि पर कछू लागी पीक सुरङ्ग ।
मनों झलक अनुराग की उछरि परी छवि सङ्ग ॥

अरिल ।

बाढ़ी अलिही चौप न उरहि समाति है ।
समुझि लाड़िली ताहि हिये लपटाति है ॥
नवलरँगीली केलि छबीली भांति है ।
तिनके रस की बात कही क्यौं जाति है ॥

छवि निधि दुलहिन नायिका नायकरूप निधान ।
प्रेमरङ्ग तन मन रँगे ह्वै गये एकै प्रान ॥ ७५ ॥
ललित कुवरि बरनौं कहा नखसिख रूप अपार ।
नेनकोर पाछे लगे फिरे रसिक सुकुवार ॥७६॥
मन अटक्यौ छवि अलक सों नैन बदनतन रङ्ग ।
श्रवन लगै बैननि मधुर नासा सौरभ रङ्ग ॥७७॥
अङ्ग अङ्ग पिय के सबे परे प्रेम के फन्द ।
राचि लै मुख जीवति रहै श्रीवृन्दावनचन्द ॥७८॥
भई भीर छवि की तहां और प्रीति उर मांहि ।
पर्यौ लाल मन जाय तहँ निकसन पावत नाहिं ॥
अति उदार सुकुवार मन रसिक सुँदर सिरमौर ।
नैन सैन बानन छयौ छाड़ी नहि तउ ठौर ॥८०॥
नैन श्रवन नासा अधर चिबुक रूप को खानि ।
गहि पियमन इन सबनि मिलि दयौ प्रेम के पानि॥
पुनि फल उरजनि की झलक लेति लालमन चोरि।
करजनकरिजवकुवतपियकछुमुसकातिमुखमोरि ॥
परिरम्भन चुम्बन अधर महामधुर रस पाइ ।
बीच सलोनी चितवनी लेतहिँ सुखहि बढ़ाइ ॥

हाव भाव लावण्यता विञ्जन अंग निहारि ।
उज्जल हांसि कपूर की पुटि दै रचे सँवारि ॥
भौंह बङ्क नैननि भुकनि कर धूननि मुख नेत।
अदरक सूच अचार ढिग ज्यौं रुचि त्यौं करि लेत॥
नैननि रसना करि रसिक जेंवत तृपत न हाइ ।
अद्भुत वतियां मदन की कहि न सकत है कोइ ॥
भाजन भूषन अंग दुति छविजल दुतिहि न और।
नैन कटोरिन करि पिवत स्यामास्यामकिशोर ॥
बीरी मुख अनुराग की स्वास पवन आनन्द ।
अति सुवास मृदुहास विच होत मन्दही मन्द ॥
पौढ़े प्रेम प्रजङ्क पर ओढ़ि प्यार कौ चीर ।
गौरस्याम दोउ अंग मिलि यों ज्यों द्विविधा नीर ॥
परम रसिक रसरासि दोउ परि जु प्रेम के फन्द।
रहत भरे आनन्द में जुग चकोर विविचन्द ॥
सखी चकोरै अति सरस है ससि छवि रसरंग।
पल २ पोवति दृगनि भरि होत न कबहूँ भंग ॥
हित ध्रुव सखियन सरन गहु ऐसे मन अनुसार।
अरु तिनही को संग करु जिनकैं यहै विचार॥

रचि कीनौ सिंगार मनि जो लै राखै सीस ।
ताके हिय में बसत रहै श्रीब्रन्दाबन-ईस ॥
जैहै मन सिंगार को सब गुन भरि अनुराग ।
पहिरौ पिय हिय प्यार सों मोहप्रेम के ताग ॥
अदभुत सरिता प्रेम की ब्रन्दाबन चहुँ ओर ।
नव नव रंगतरंग उठि मदन पवन झकझोर ॥
ऐसे रसिक किशोर ध्रुव ध्रुव के हिय में राखि ।
अदभुत रस की माधुरी नैननि-रसना चाखि ॥
दोहा कहि सिंगार मनि साठ सु चौतिस आठ ।
प्रेम तिही उर माल को रहै जो करि ध्रुव पाठ ॥

इति श्रीमनसिङ्गार सम्पूर्णम् ।

अथ भजनशतक लिख्यते ।

दोहा ।

श्रीहरिबंश सरोजपद जोपै सेयौ नाहि ।
भजनरीति अरु प्रेम रस क्यों आवै मन माहि ॥
हरिबँशचँदपद अरविंदपद ये निज सर्व सुजानि ।
हितध्रुवमिथुनकिशोरसों तिहिबल ह्वै पहिचानि ॥

सोरठा ।

प्रेम सहित हुलसात सेवा स्यामास्याम की ।
कोजै मनही भांति दिन २ अति अनुराग सों ॥३॥

दोहा ।

प्रथमहि मज्जन कीजिये सौरभ अङ्ग लगाय ।
ता पाछे रचि पचि करै सुन्दर तिलक बनाय ॥
तिय के तन को भाव धरि सेवा हित सिंगार ।
जुगल महल की टहल को तब पावै अधिकार ॥
नारी किंवा पुरुष है जाके मन यह भाव ।
दिन २ तिनकी चरन-रज लै लै मस्तक लाव ॥
दुलहिनि दूलह छवि झलक तहँ राखै दोउ नैन।
भाव तरङ्गनि मनहु रँग सुनत मधुर मृदु बैन ॥
लाल लड़ैती केलि कर अद्भुत प्रेम विलास ।
तिनही के रँग रँगि रहै सबते होइ उदास ॥८॥
मन की दृढ़ता हेत लगि कही भजन की रीति ।
सुनिये हिय के श्रवन दै तब उपजै मम प्रीति ॥
राधावल्लभ रूप रस करहु नैन मत पानि ।
प्रेम सहित निज केलि गुन करि रसनादिनगानि॥

गद्गद सुर नैना सजल दम्पति रस रहि भीन ।
इहि गति बृन्दाविपिन में फिरै प्रेम तन लीन ॥
नील पीत अंचल झलक नैननि में रहि नित्त ।
जावकजुत नखचरणदुति बसौ सदा ध्रुवचित्त ॥

सोरठा ।

चलत रहौ दिन रैन, प्रेम बार धारा नयन ।
जागत अरु सुख सैन, चितै २ विधि कुवंरि छवि ॥

दोहा ।

करत टहल वन्दन अधिक रचै प्रेम मन जौन ।
ते तब ऐसे सब भये ज्यों सालन बिन लौन ॥१४॥
हित ध्रुव निरखत नेकु नहि वैभवता की ओर ।
रंच प्रेम में अपनपौ हारत नवलकिशोर ॥१६॥
साधन करत अनेक जो कोटि कोटि जुग जाहि ।
तबहु न आवत प्रेम बिनु रसिक कुवंरि मन माहि ॥
एक प्रेम पैहैं कुँवर करत जतन बहुतेर ।
मन वच निश्चै जानि यह एक ग्रन्थ बहु फेर ॥
नैनन झलक्यौ प्रेम जल भई न तन-गति और ।
जिहि उर कहु कैसे लसै परम रसिक सिरमौर ॥

नवकिशोर इक प्रेम बस नाहिन आन उपाइ ।
बहुत चतुरई किन करौ बातैं कोटिबनाइ ॥१९॥
मन को गति को रोकि कै भयौ रहै दिन दीन।
रसिकनि की पद रज तलै लुठत सदा ह्वै खीन ॥
सहजहिँ जल अरु प्रेम को एक सुभावहि जान।
चलत अधिक तिहि ठांव को पावत जहां निवान ॥
देखौ अदभुत प्रेम फल सबते ऊँचौं आहि ।
सीस करै जब चरण तर तब पहुंचै कर ताहि ॥
वैभव सुख ध्रुव जहाँ लगि छत्रधार सत अर्व ।
प्रेम गरीबी सहज पर बार बार द्यौ सर्व ॥२३॥
जब लगि मन चंचल भयौ फिरत विषै सुख माहि।
तब लगि दम्पतिचरन सों होत प्रेम छिन नाहि ॥
मन गति चंचल अवनि तें उपजत छिन सत रङ्ग ।
आवत तबही हाथ जौ रसिकनि को हाय सङ्ग ॥
भयौ न रसिकनि सङ्ग जौ रँग्यौ न मन रँग प्रेम।
पारस विन परसै कहां होत लोह ते हेम ॥२६॥
जब लगि मन गज खुभत नहि प्रेम पङ्क में आइ।
तब लगि पांचौ रिपिनि के सुख में रहत समाइ॥

सोरठा ।

रसिकनि के रहु सङ्ग, रे मन आन विचार तज।
नैननि कौ लै रङ्ग, मिथुनरूप रसरङ्ग कर ॥२८॥

दोहा ।

रे मन रसिकनि सङ्ग बिनु रंच न उपजै प्रेम ।
या रस कौ साधन यहै और करहु जिन नेम ॥
दम्पति छबि में मत्त जे रहत दिनहि इक रङ्ग ।
हित सों चित चाहत रहौं निसिदिन तिनको सङ्ग ॥
झूलत झूमति दिन फिरैं घूमत दम्पति रङ्ग ।
भाग पाय छिन एक जौ पैहैं तिनको सङ्ग ॥३१॥
सेवा अरु तीरथ भ्रमन फल तेहि कालहि पाइ ।
भक्तन सँग छिन एक में लेत भक्त उपजाइ ॥३२॥
जिनके हिय में बसत हैं राधावल्लभलाल ।
तिनकी पदरज लेइ ध्रुव पिवत रहौ सब काल ॥
महामधुर सुकुवार दोउ जिनके उर बसि आनि ।
तिनहू ते तिनको अधिक निश्चै कै ध्रुव जानि ॥
जिनके जाने जानियै जुगलचन्द सुकुवार ।
तिनकी पदरज सीस धरि ध्रुव कै यहै अधार ॥

सोरठा ।

तृन सम जब ह्वै जाहि, प्रभुतासुख त्रैलोक के ।
यह आवै मन माहि, उपजै रंचक प्रेम जब ॥३९॥

दोहा ।

मन वच धरैं अनन्य व्रत करत भजन रसरीति ।
तैसहि भावत स्याम को हित ध्रुव मानि प्रतीति ॥
पिय प्यारी के पद कमल निसवासर करि ध्यान ।
रे मन भजन अनन्य में मिलवौ मति कछु आन ॥
राधावल्लभलाल से परम रसिक सिरमौर ।
ते पद छाड़े मूढ़मति खोजत फिरि कछु और ॥
ज्ञान धर्म व्रत कर्म में देतहि मन अज्ञान ।
करत आस तन्दुलन की कूटत है तुस धान ॥
राधावल्लभलाल-यश जिन उर नाहि सुहात ।
देखौ ते नर मन्दमति करत आपु अपघात ॥४१॥
संजम व्रत मष करत हैं वेद पाठ तप नेम ।
इन करि हरि पैयत नहीं विन आये उर प्रेम ॥
कर्म धर्म मत अमित के त्यागि सांख विधि जोग ।
माया उदधि प्रवाह में दयौ बहाय सब लोग ॥

तहाँ जो नौका कर परे भक्ति विमल रस सार ।
तिहि पर भक्तनिवल कृपा चढ़त सुलभ ह्वै पार ॥
जे अनुसर है ज्ञान पथ निपटत विरला कोइ ।
तिहि साधन को फल इहै मुक्ति जीव को होइ ॥
कर्म श्राद्ध में कुशल जे पितरलोक जे जांहि ।
भक्त गिनत नहि मुक्ति को और लोक किहि मांहि ॥
कर्म धर्म में करहु जिन भगवत धर्म मिलाइ ।
सिंहसरन गहि मूढ़मति स्यारसरन कत जाइ ॥
बड़ी मूढ़ता गहि जिये लिये लोक की लाज ।
पाछे गर्दभ को गह्यो चढ़े बड़े गजराज ॥ ४८ ॥
विधि निषेध के हैं बँधे और धर्म मृग मानि ।
केहिर पुनि विन बंध नहि भगवत धर्महि जानि ॥
विषई है इन्द्रीन बस भक्त अनन्य जो होइ ।
कर्म कोटि जितेन्द्रि यह तिहि समान नहि कोइ ॥
श्रुतिपुरानविधि सुमिर बहु अलप आय इहि काल ।
लिहु सार गहि हंस जिमि विमल भजन नँदलाल ॥
रीति भजन की ध्रुव यहै छाड़े सबकी आस ।
जुगलचरन की सरन गहि मन में धरि विस्वास ॥

भक्तहि अन्तर को रचै नानाविधि के फन्द ।
चित्त भ्रान्ति सब दूर करि करौ भजन आनन्द ॥
नानाविधि पथ भजन के भजत तिनहि सब कोइ ।
जो है जिहि की भावना सिद्धि सोइ पै होइ ॥
भवन चतुरदस सुख नहीं भक्तनपद सम तूल ।
माया कौतुक जो कछू सो है सब दुखमूल ॥५५॥
सो दिन कबहूं आयहै मनहिं बासना जांहि ।
सरसचित्तअहिनिसिफिरौं सघनविपिनबनमांहि ॥
भक्ति प्रकार अनेक विधि मन मन औरै बात ।
भोजे विपिनविहार रस तिनहिन और सुहात ॥
जे सेवत बृन्दाविपिन जुगल कुँवरि सुखऐन ।
ते बैकुण्ठ सुखादितन चितवत नहिँ भरि नैन ॥
नौतन बैस किशोर छवि बसत जिनहि उर नित्त ।
पौगरादि लीलादि हूं भावत नाहिन चित्त ॥
सकल भजन के मांह है हित ध्रुव यह रस सार ।
जुगल कुवर सुकुवार नव नितक्रुत विपिनविहार ॥
नवलप्रियाछवि बसि रही इहिविधि नैननि मांहि ।
निकसत सघन लतान ते धरैं कण्ठ पिय बांहि ॥

नीलाम्बर रह अरुझि कै कनकलतनि सों आहि ।
इहि छवि सों कब निरखिहौं पियनिरवारततादि॥
नवल कुञ्ज नव सहचरी नवलखगादि कुरङ्ग ।
सब नवलनि में नवल दोउ करत केलि सुखरङ्ग ॥
अदभुत रस सुख सार में कब ह्वैहै मन लीन ।
ध्रुव अखियां तहँ यों रहैं ज्यौं जल में गति मीन ॥
इहि विधि गति ह्वै है कबहुं और न कछू सुहाइ ।
वृन्दावन सुखरङ्ग में रहै चित्त ठहराइ ॥ ६५ ॥
सकल बात घटतै घटै मन की वृत्ति अनेक ।
वृन्दाविपिनविहाररस यहै बढ़ै रस एक ॥६६॥
विवस सदा विहरत रहौं अदभुत सुखहि विचार।
नैन सजल ह्वै कै ढरै सोभा विपिनविहार ॥६७॥
जिनकै मन ध्रुव रचि रहे वृन्दावन सुखरङ्ग ।
तिहि सुख को जानै सोई डोलत भये मतङ्ग ॥
सुनि ध्रुव जब लगि प्राण हैं आनहु कछु जिन चित्त ।
परम रसिकवर विवि कुँवर हिये लड़ावहु नित्त ॥
ऐसे रसिककिशोर तजि भजत मन्दमति आन ।
मानुषतन खोवत वृथा समुझत नहि कछु हान ॥

जे नर बृन्दाविपिन तजि अनतहि मन लै जात।
कञ्चन तजि गहि कांच को पुनि पीछे पछतात॥
धावत बृन्दाविपिन तजि जे मन आन विचार।
अतिहीं दुर्लभ ठौर यह तातें कढ़ियत मार॥७२॥
दुर्लभ बृन्दावन अहो राख्यौ सब तें गोइ।
तिहिँ ठां पावत रहत क्यौं भागहीन जो होइ॥
करतहिंविविधिविलासतहँमिथुनरसिकसिरमौर।
बृन्दावन बिन चित्त में आनहु कछु जिन और॥
जे नर निन्दित मन्दमति बृन्दावन को बास।
सपनेहु परस न कीन्ह जे तजु ध्रुव तिनको आस॥
दुर्लभनिधि देखत सुनत सो आवत उर नांहि।
जिन धर्महि से कष्ट बहु हठि ठानत मन मांहि॥
पांचो इन्द्री साधि कै जोग मौन व्रत लीन।
देखौ भजन अनन्य बिन वाद बृथा श्रम कीन॥
जो ह्वै आवत देह सो कैसहुँ दोष बिशाल।
जो है एक अनन्यव्रत तजत न ताहिँ गुपाल॥
जो घरनी है अति बुरो पति नहि छाड़त ताहि।
देखतहो पर पुरुष तन तजत ताहिँ छन माहि॥

विन अटकै मन पद कमल जो छिन रहत पराय।
देखत यम विहरत मनो जीवत मृतक समान ॥
विधि किशोर छवि रङ्ग जो नैननि भीजे नेह ।
यह मन भयो न मैंन सो तो निसफल भइ देह ॥
विन अरपे सुनि जो कछू जे लागत हैं खान ।
देखो तिहि अपराध को कहँ लगि कहौं प्रमान ॥
जलहू भूलि न पीजिये विनु लीन्हें हरि नाम ।
ऐसी जो उपजै मनहि तब पावै सुखधाम ॥८३॥
राधावल्लभलाल को रुचि सों ज्यावौ नित्त ।
सो जूठो नित पाइये और न आनहु चित्त ॥८४॥
सुनि ध्रुव धर्मी आन सों कबहुं न कीजे वाद ।
सब तजि दिनहि निसंक ह्वै लीजै महाप्रसाद ॥
रे मन लागत भोग जब कीजै तब न विचार ।
सब प्रसाद लै पाइये व्यौरो भेद निवार ॥ ८६ ॥
जो है मन विस्वास ध्रुव तब सुधरी सब बात ।
नातर माया-पन्थ में फिरै जु टक्कर खात ॥ ८७ ॥
ज्यों चातक स्वाती बिना परसत नहि जल और ।
दृढ़ता यौं मन चाहिये फिरै न वहुती ठौर ॥८८॥